अध्याय–7
फल एवं सब्जियों का मानव आहार में महत्व
(Importance of fruits and vegetables in human diet)

हमारे देश में खेती योग्य भूमि के 7.2 मिलियन हेक्टेयर में फलो की खेती एवं 9.3 मिलियन हेक्टेयर में सब्जियों की खेती की जाती है। इस क्षेत्र से हमारे देश में 2013–14 में फल उत्पादन 88.97 मिलियन टन एवं सब्जी उत्पादन 162.29 मिलियन टन हुआ (इंडियन हॉर्टीकल्चर डाटाबेस, 2014)। आहार विशेषज्ञों के अनुसार भारत में संतुलित आहार में कम से कम 300 ग्राम सब्जी, जिसमें 100–125 ग्राम पत्तियों वाली, 80–120 ग्राम अन्य दूसरी सब्जियाँ तथा 85–100 ग्राम जड़ों वाली सब्जियाँ प्रत्येक दिन प्रति व्यक्ति को खानी चाहिए। भारतीय औषधि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली, ने संतुलित आहार में कम से कम 120 ग्राम फल एवं 280 ग्राम सब्जी प्रत्येक दिन प्रति व्यक्ति को संस्तुति की गई है।

फल एवं सब्जियाँ मनुष्य को स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती है, इनमें विटामिन खनिज पदार्थ, कार्बोहाइड्रेट एवं प्रोटीन पर्याप्त मात्रा में पाये जाते है। इनके साथ ही साथ फल एवं सब्जियाँ स्थूल खाद्य के साधन हैं। प्रायः हमारे भोजन में कैलोरी, विटामिन– "ए" तथा विटामिन "बी" का अभाव पाया जाता है। यह देखा गया है कि आलू, शकरकन्द आदि कुछ सब्जियों में गेहूँ एवं मक्का की अपेक्षा प्रति हेक्टेयर अधिक भोज्य पदार्थ मिलता है। मानव आहार में फलों एवं सब्जियों की महत्ता सर्वविदित है। साधारण भारतीय के भोजन में आवश्यक पोषक तत्व बहुत कम मात्रा में पाये जाते है। फलों एवं सब्जियों में विटामिन एवं खनिजों की प्रचुर मात्रा पायी जाती है इसलिए इन्हें संरक्षी खाद्य (Protective food) भी कहा जाता है। पोषक तत्वों की प्रचुरता के आधार पर मुख्य फलों एवं सब्जियों का वर्णन निम्न हैः–

1. खनिजों की प्रचुरता (Richness of minerals) शरीर के स्वस्थ संचालन एवं वृद्धि के लिये कम से कम दस खनिजों की अधिक मात्रा में आवश्यकता पड़ती है। इसमें से कैल्सियम (चूना), आयरन (लोहा) तथा फॉस्फोरस की हमारे भोजन में कमी पायी जाती है।

(अ) कैल्सियम – इसकी कमी से बच्चे सूखा रोग, चिड़चिड़ापन व अल्प वृद्धि के शिकार हो जाते है। आहार में इसकी कमी से अस्थिमृदुता (Osteomalacia) होने के कारण शिशु जन्म में कष्ट होता है। इसकी प्रचुर मात्रा शरीर में हो तो लौह तत्व की भी कम आवश्यकता होती है। यह हड्डियों को मजबूत तथा शरीर को रोगरोधी बनाने के लिए आवश्यक है। लीची, करौंदा, केला, बेल तथा धनिया, मेथी एवं मूली पत्ती आदि में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

(ब) आयरन – लौह तत्व लाल रुधिर कणिकाओं का एक अनिवार्य अंग है जो शरीर में ऑक्सीजन के संवाहक का कार्य करता है। यह अनेक ऊतकों (Tissues) तथा उत्प्रेरको का अनिवार्य भाग बनाता है जो देह में ऑक्सीकरण एवं अपचयन को नियमित करते है। करौदां, खजूर, काजू, धनिया पत्ती आदि में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

(स) फॉस्फोरस – यह शरीर के सभी सक्रिय ऊतकों के लिए अनिवार्य तत्व है। हड्डियों व मृदु ऊतकों के गुण तथा ऊतकों में उचित द्रव अंश के अनुरक्षण के लिए इसकी आवश्यकता पड़ती है। फॉस्फोरस अम्ल क्षार सन्तुलन के अनुरक्षण में मदद करता है। यह वसा अम्लों के स्थानांतरण में भी सहायक होता है। फॉस्फोरस काजू, अखरोट, लीची, केला, आलू, एस्पैरगस, पालक, चुकंदर, मेथी, अरबी, मटर, लोबिया, चौलाई, सहजन एवं मूली की पत्तियों में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

2. विटामिन्स की प्रचुरता (Richness of Vitamins) सन्तुलित भोजन में विटामिन्स का बहुत महत्व है। ये शरीर की रोगों से रक्षा करते है। विटामिन ए,बी,सी,डी तथा ई शरीर के लिए मुख्य है। विटामिन ए,बी,सी फलों एवं सब्जियों में पर्याप्त मात्रा में पाये जाते है।

(i) विटामिन 'ए'- यह शरीर की सन्तुलित वृद्धि एवं जनन, आँख के रोग (रतौंधी) इन्फ्लूएन्जा एवं घाव भरने के लिए आवश्यक

तालिका 1.1 प्रमुख फलों का पोषण मान

क्र. स.	फल	नमी %	प्रोटीन %	वसा %	कार्बोहा %	कैल्शियम %	फास्फोरस %	लोहा %	विटामिन 'ए' IU/100 ग्राम	विटामिन 'बी1'	निकोटिनिक अम्ल	राइबोफ्लेविन	विटा. 'सी'
										मि. ग्रा./100 ग्राम			
1	अनार	78.0	1.6	0.1	14.6	0.01	0.07	0.3	—	—	—	100	16
2	अनन्नास	86.5	0.6	0.1	12.0	0.02	0.01	0.9	60	—	—	120	63
3	अमरूद	76.1	1.5	0.2	14.5	0.01	0.04	1.0	अल्प	30	0.2	30	299
4	आम (कच्चा)	90.0	0.7	0.1	8.8	0.01	0.02	4.5	150	—	—	30	3
5	आम (पका)	86.1	0.6	0.1	11.8	0.01	0.02	0.5	4800	40	0.3	50	13
6	आंवला	81.2	0.5	0.1	14.1	0.05	0.02	1.2	—	30	0.2	—	600
7	अंगूर	85.5	0.8	0.1	10.2	0.03	0.02	0.4	15	40	0.3	10	3
8	केला	61.4	1.3	0.2	36.4	0.01	0.05	0.4	अल्प	150	0.3	30	1
9	खजूर	26.1	3.0	0.2	66.3	0.07	0.08	10.6	600	90	0.8	30	—
10	जामुन	28.2	0.6	0.1	9.7	0.02	0.01	1.0	—	—	—	—	—
11	नारंगी	88.0	0.6	0.1	10.2	0.03	0.03	0.1	200	30	0.2	—	20
12	नाशपाती	86.9	0.2	0.1	11.5	0.01	0.01	0.7	14	20	0.2	30	अल्प
13	पपीता	89.6	0.5	0.1	9.5	0.01	0.01	0.4	2020	40	0.2	250	46
14	बेर	35.9	0.8	0.1	12.8	0.03	0.03	0.8	70	—	—	—	—
15	बेल	68.2	1.3	0.2	30.6	0.09	0.05	0.3	186	12	0.9	1191	15
16	लाइम	84.6	1.5	0.1	10.9	0.09	0.02	0.3	26	20	0.1	—	63
17	लीची	84.3	0.7	0.3	9.4	0.21	0.31	0.03	14	87.5	—	122.5	अल्प
18	लेमन	85.0	1.0	0.9	11.1	0.07	0.01	2.3	अल्प	20	0.1	4	39
19	शरीफा	73.5	1.6	0.3	23.9	0.02	0.04	1.0	अल्प	—	—	—	
20	सेव	85.9	0.3	0.1	13.4	0.01	0.02	1.7	अल्प	120	0.2	30	2
21	संतरा	87.8	0.9	0.3	10.6	0.05	0.02	0.1	350	120	0.3	60	68

तालिका 1.2 विभिन्न सब्जियों के प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग का पोषण मान

सब्जी का नाम	नमी की मात्रा %	कार्बो (ग्राम)	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्राम)	विटा.ए (IU)	विटा.बी1 (मि.ग्रा.)	राइबो. (मि.ग्रा)	विटा. सी (मि.ग्रा.)	कैल्शि. (मि.ग्रा.)	फॉस. (मि.ग्रा.)	लोह (मि.ग्रा.)	पोटे. (मि.ग्रा.)
चौलाई	85.7	6.3	4.0	0.5	9,200	0.03	0.10	99	397	83	25.5	341
चुकंदर	87.7	8.8	1.7	0.1	0	0.04	0.09	88	200	55	1.0	43
करेला	92.4	4.2	1.6	0.2	210	0.07	0.09	88	20	70	1.8	152
लौकी	96.1	2.5	0.2	0.1	0	0.03	0.01	6	20	10	0.7	87
बैंगन	92.7	4.0	1.4	0.3	124	0.04	0.11	12	18	47	0.9	2
पत्तागोभी	91.9	4.6	1.8	0.1	2,000	0.06	0.03	124	39	44	0.8	114
गाजर	86.0	10.6	0.9	0.2	3,150	0.04	0.02	3	80	30	2.2	108
फूलगोभी	90.8	4.0	2.6	0.4	51	0.04	0.10	56	33	57	1.5	113
हरी मिर्च	85.7	3.0	2.9	0.6	292	0.19	0.39	111	30	80	1.2	217
ग्वार	81.0	10.8	3.2	0.4	316	0.09	0.09	47	—	—	—	—
लोबिया	84.6	8.0	4.3	0.2	941	0.07	0.09	13	80	74	2.5	—
खीरा	96.3	2.7	0.4	0.1	0	0.03	0.01	7	10	25	1.5	50
सेम	86.1	6.7	3.8	0.7	312	0.1	0.06	9	210	68	1.7	74
लहसुन (सूखी)	62.0	29.80	6.3	0.1	0	0.06	0.03	13	30	310	1.3	—
गांठगोभी	92.7	3.8	1.1	0.2	36	0.05	0.09	85	20	35	0.4	37
भिण्डी	89.6	6.4	1.9	0.2	88	0.07	0.10	13	66	56	1.5	103
खरबूजा	94.0	5.0	1.0	0	3,420	0.04	0.05	33	0.017	0.016	—	—
प्याज	86.8	11.0	1.2	—	0	0.08	0.01	11	180	50	0.7	—
मटर	72.0	15.8	7.2	0.1	139	0.25	0.01	9	20	139	1.5	79
परवल	92.0	2.2	2.0	0.3	255	0.05	0.06	29	30	40	1.7	83
कद्दू	92.6	4.6	1.4	0.1	84	0.06	0.04	2	10	30	0.7	139
मूली (सफेद)	94.4	3.4	0.7	0.1	5	0.06	0.02	15	50	22	0.4	138
तोराई	95.2	3.4	0.5	0.1	56	0.07	0.01	5	40	40	1.6	50
टिंडा	93.5	3.4	1.4	0.2	23	0.08	0.04	18	25	24	0.9	24
पालक	92.1	2.9	2.0	0.7	9,300	0.03	0.07	28	73	21	10.9	206
पालक	92.1	2.9	2.0	0.7	9,300	0.03	0.07	28	73	21	10.8	20.6
टमाटर (हरा)	93.1	3.6	1.9	0.1	320	0.07	0.07	0.131	20	36	1.8	114
शलजम	91.6	6.2	0.5	0.2	0	0.04	43	0.6	30	40	40	
तरबूज	95.8	3.3	0.2	0.2	590	0.05	0.05	6	0.07	0.07	—	—

है। यह आम,पपीता,खजूर,कटहल,सन्तरा, पालक तथा अरबी, धनिया, मेथी व सरसों की पत्तियों में पर्याप्त मात्रा में पायी जाती है।

(ii) **विटामिन 'बी1'**- (थायमिन) विटामिन की कमी में बेरी–बेरी, लकवा, त्वचा की स्पर्शशक्ति का ह्रास, गले की सूजन तथा भूख, शरीर भार में कमी आदि रोग हो जाते है। काजू, केला, पपीता, लीची, मटर, सेम, हरी पत्तियाँ (चौलाई व मेथी) हरी मिर्च, गाजर, लहसुन इसके अच्छे स्रोत है।

(iii) **विटामिन 'बी2'**-(राइबोफ्लेविन) विटामिन की कमी में शारीरिक भार कम, भूख कम लगना, नाक की सूजन व आँखो का लाल रहना आदि रोग होते है।

राइबोफ्लेविन वृद्धि एवं स्वस्थ त्वचा के लिए आवश्यक है जो मुख्य रूप से हरी सब्जियों, बेल, पपीता, काजू, लीची, अनन्नास व अनार आदि इसके अच्छे स्रोत है।

(iv) **विटामिन 'सी'** (एसकॉर्बिक अम्ल) विटाामिन की कमी से गठिया, स्कर्वी रोग, दांतों का कमजोर होना आदि बहुत से विकार उत्पन्न होते है। बारबडस चेरी, आँवला, अमरूद, सन्तरा, चीकू, अनन्नास, हरी मिर्च, टमाटर, हरा धनिया इसके अच्छे स्रोत है।

3. कार्बोहाइड्रेट्स की प्रचुरता (Richness of carbohydrates) – कार्बोहाड्रेट्स शक्ति का भण्डार है। एप्रीकोट, खजूर, करौंदा (सूखा), किशमिश, केला, बेल, शरीफा, जामुन, आलू, शकरकन्द आदि इसके प्रमुख स्रोत है।

4. प्रोटीन की प्रचुरता (Richness of Proteins) – प्रोटीन का शरीर की रचना में विशेष योगदान है। इसकी युवा अवस्था में अधिक आवश्यकता पड़ती है। अखरोट, कटहल, शरीफा, मटर, चवला, भारतीय सेम आदि इसके अच्छे स्रोत है।

5. वसा की प्रचुरता (Richness of Fat) – फल वसा शक्ति का मुख्य स्रोत है। फलों में अखरोट, बादाम, काजू व एवोकैडो में अपेक्षाकृत अधिक वसा पाई जाती है। सब्जियों में वसा की मात्रा बहुत कम पाई जाती है।

6. कार्बनिक अम्लों की प्रचुरता (Richness of Organic acids) – फलों में साइट्रिक यौगिक व टार्ट्रिक अम्ल पर्याप्त मात्रा में पाये जाते है। ये भूख बढ़ाने व पाचन क्रिया में सहायता करते है। सेव, अंगूर एवं नीबू वर्गीय फल ,हरीमिर्च, पालक इसके अच्छे स्रोत है।

7. रेशों की प्रचुरता (Richness of Fibres) – स्थूल खाद्य पदार्थ पाचन क्रिया में सहायक होता है। तथा कब्ज को रोकता है। अधिकांश फलों एवं सब्जियों में विशेष रूप से पत्ती वाली सब्जियों में जल रेशा या सेल्यूलोज अधिक होता है। ये आँत की पेशियों को स्फूर्ति प्रदान करती है। अमरूद, केला, अनार, आँवला, अंगूर, अखरोट, चौलाई, सरसों, पालक व विलायती पालक आदि इसके अच्छे स्रोत है।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. किस फल में सर्वाधिक विटामिन 'सी' पाया जाता है?

   (अ) आम में (ब) नीबू में

   (स) आंवला में (द) बेल में

2. विटामिन 'बी1' की कमी से होने वाला रोग है–

   (अ) बेरी–बेरी (ब) रिकेट्स

   (स) एनीमिया (द) रतौंधी

3. कैल्सियम का हमारे शरीर में उपयोग है–

   (अ) दाँतों व हड्डियों के विकास के लिए

   (ब) भोजन को पचाने के लिए

   (स) प्रोटीन निर्माण के लिए

   (द) रक्त निर्माण के लिए

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

4. फल एवं सब्जियाँ मनुष्य को स्वस्थ रखने के लिए कौन–कौन से पोषक तत्त्व प्रदान करते है?
5. संतुलित मानव आहार में सब्जियों की कितनी मात्रा होनी चाहिये?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

6. संतुलित भोजन में विटामिन्स का महत्त्व लिखिये।
7. मानव आहार में रेशे का महत्त्व लिखिये।

निबन्धात्मक प्रश्न

8. मानव आहार में फल एवं सब्जी का महत्त्व लिखिये।

उत्तरमाला

1. (स) 2. (अ) 3. (अ)

अध्याय–8

सब्जियों का वर्गीकरण
(Classification of Vegetables)

अध्ययन एवं उगाने की दृष्टि से सब्जियों को विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है। तीन प्रकार के वर्गीकरण की जानकारी निम्न प्रकार है :–

1. ऋतुओं के आधार पर वर्गीकरण – (Classification based on growing season)

भारत में लगभग 125 वनस्पतियों को सब्जियों के रूप में उगाया जाता है। देश में फसल उत्पादन की तीन ऋतुएँ मानी जाती हैं।

(1) वर्षा ऋतु या खरीफ की फसल – जून से सितम्बर तक

(2) शीत ऋतु या रबी की फसल – अक्टूबर से फरवरी तक

(3) ग्रीष्म ऋतु या जायद की फसल – मार्च से मई तक

इन ऋतुओं में उगायी जाने वाली कुछ प्रमुख सब्जियाँ निम्न प्रकार हैं :–

(1) खरीफ की सब्जियाँ – ग्वार, टमाटर, लौकी, खीरा, करेला, भिण्डी, तोरई, बैंगन आदि।

(2) रबी की सब्जियाँ – फूलगोभी, मटर, प्याज, लहसुन, गाजर, मूली, पत्तागोभी, गाँठ गोभी आदि।

(3) जायद की सब्जियाँ – लौकी, तोरई, भिण्डी, खीरा, ककड़ी, खरबूज, करेला, टिण्डा आदि।

2. उपयोगी भाग के आधार पर वर्गीकरण – (Classification based on parts used as food)

इसमें खाये जाने वाले विभिन्न वानस्पतिक भागों के आधार पर सब्जियों को वर्गीकृत किया जाता है, जो निम्न प्रकार से हैं –

(1) जड़ वाली सब्जियाँ – मूली, गाजर, शलजम, चुकन्दर।

(2) कन्द वाली सब्जियाँ– आलू, शकरकन्द।

(3) बल्ब वाली सब्जियाँ – प्याज, लहसुन।

(4) तने एवं पत्तियों वाली सब्जियाँ – पालक, मेथी चौलाई, पत्तागोभी, धनिया।

(5) फूल वाली सब्जियाँ – फूलगोभी, ब्रोकली।

सारणी 8.1– एक बीज पत्रीय पौधे (Monocotyledeneae)

कुल (Family)	सब्जी का हिन्दी नाम	वानस्पतिक नाम (Botanical Name)
1. एलिएसी (Alliaceae)	प्याज	*Allium cepa L.*
	लहसुन	*Allium sativum L.*
2. ऐरसी (Araceae)	अरबी	*Colocacia esculenta L.*
	जमीकन्द	*Amorphophallus companulatus L.*
3. पोएसी (Poaceae)		मीठी मक्का *Zea mays* var. raugosa *L*
4. लिलिएसी(Liliaceae)	सतावर	*Asparagus officinalis L.*
5. डायोस्कोरियेसी (Dioscoreceae)	रतालू	*Dioscorea alata L.*
	चाइनीज रतालू	*Dioscorea batatas L.*

सारणी 8.2 – द्विबीज पत्रीय पौधे (Dicotyledeneae)

कुल(Family)	सब्जी का हिन्दी नाम	वानस्पतिक नाम (Botanical Name)
1. ब्रेसीकेसी (Brassicaceae)	मूली	*Raphanus sativus L.*
	फूल गोभी	*Brassica oleracea L.* var. *botrytis L.*
	पत्ता गोभी	*B. oleracea L. var. capitata L.*
	गाँठ गोभी	*B.oleracea L.* var. *Caulorapa L.*
2. चीनोपोडिएसी (Chenopodiaceae)	चुकन्दर	*Beta vulgaris L.*
	विलायती पालक	*Spinacea oleracea L.*
	बथुआ	*Chenopodium album L.*
3. कनवोलवुलेसी (Convolvulaceae)	शकरकन्द	*Ipomea batatus L.*
4. कुकर बिटेसी(Cucurabitaceae)	लौकी	*Lagenaria siceraria (Mol.) Standl.*
	चिकनी तोरई	*Luffa cylindrica L.*
	नसदार तोरई	*L. acutangula (L.) Roxb.*
	कद्दू	*Cucurbita moschata (Duch.) Poir*
	टिण्डा	*Citrullus lanatus var. fistulosus L.*
	करेला	*Momordica charantia L.*
	परवल	*Tricosanthes dioica L.*
	ककड़ी	*Cucumis melo L.*
	पेठा	*Benincasa hispida (Thumb.) cogn.*
	खीरा	*Cucumis sativus L.*
	खरबूज	*Cucumis melo L.*
	चप्पनकद्दू	*Cucurbita pepo L.*
	चिचिण्डा	*Trichosanthes cucumerina L.*
	कुन्दरू	*Coccinia indica L.*
5. एसटिरेसी (Asteraceae)	सलाद	*Lactuca sativa L.*
6. फेबेसी (Fabaceae)	मटर	*Pisum sativum L.*
	सेम	*Dolichas lablab L.*
	बाकला	*Vicia faba L.*
	ग्वार	*Cyamopsis tetragonoloba (L.) Taub.*
	लोबिया	*Vigna unguiculata L.*
	मेथी	*Trigonella foenum graecum L.*
	कसूरी मेथी	*T. corniculata L.*
	सोयाबीन	*Glycine max L.*
7 लेबीएटी (Labiatae)	पोदीना	*Mentha arvensis L.*
8. मालवेसी (Malvaceae)	भिण्डी	*Abelmoschus esculentus (L.) Moench.*
9. सोलेनेसी (Solanaceae)	आलू	*Solanum tuberosum L.*
	टमाटर	*Lycopersicon Lycopersicum (L.) Karsten*
	बैगन	*Solanum melongena L.*
	मिर्च,	*Capsicum annum L.*
	शिमला मिर्च	*C. fruitescens L.*
10. एपिएसी (Apiaceae)	गाजर	*Daucus carota L.*
	धनिया	*Coriandrum sativum L.*
11. जिंजीबरेसी (Zingiberaceae)	हल्दी	*Curcuma domestica L.*
	अदरक	*Zingiber officinalis L.*
12. अमेरेन्थेसी (Amaranthaceae)	बड़ी चौलाई	*Amaranthus tricolor L.*
	छोटी चौलाई	*A. blitum L.*

(6) फल वाली सब्जियाँ – टमाटर, बैगन, मिर्च, भिण्डी, लौकी, तोरई, ककड़ी, सीताफल, ग्वार, सेम, बॉकला।

(7) बीज वाली सब्जियाँ– मटर, चना।

3. वानस्पतिक वर्गीकरण – (Botanical Calassification)

यह सब्जियों के वर्गीकरण की वैज्ञानिक विधि है। इसमें पौधों के कुल,वंश व जाति के आधार पर सब्जियों का वर्गीकरण सारणी 8.1 व 8.2 में किया गया है –

सब्जियों की खेती के प्रकार (Types of Vegetable growing)

सब्जियों की खेती सब्जियों के उगाने के उद्देश्य, उगाने की विधि, साधन–सामग्री, जलवायु, प्रबंध व्यवस्था तथा विपणन की सुविधाओं के आधार पर निम्नलिखित सात भागों में बाँटी जा सकती है :–

1. गृहवाटिका स्तर पर सब्जियों की खेती।
2. व्यावसायिक स्तर पर सब्जियों की खेती।
   (अ) मार्केट गार्डनिंग (Market gardening)
   (ब) ट्रक गार्डनिंग (Truck gardening)
3. बीज उत्पादन के लिए सब्जियों की खेती।
4. संसाधन के लिए सब्जियों की खेती।
5. बे–मौसम सब्जियों की खेती।
6. तैरते हुए सब्जी उद्यान।
7. प्रदर्शनी के लिए सब्जियों की खेती

उपर्युक्त में से प्रमुख दो प्रकार की खेती का वर्णन निम्न प्रकार है –

1. गृहवाटिका स्तर पर सब्जियों की खेती (Kitchen gardening)

'' घर के आस–पास पड़ी खाली भूमि पर परिवार की निजी आवश्यकताओं की पूर्ति के उद्देश्य से सब्जियाँ उगाने को गृहवाटिका या रसोई उद्यान (Kitchen garden) कहा जाता है''

गृहवाटिका में सब्जी उगाने का प्रचलन प्राचीन काल से चला आ रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य परिवार के लिए वर्षभर प्रतिदिन ताजा एवं पौष्टिक सब्जियाँ प्राप्त करना होता है। इस प्रकार के सब्जी उत्पादन का ध्येय पैसा कमाना नहीं होता है। सब्जियों का चयन परिवार के सदस्यों की इच्छानुसार किया जाता है। इसकी व्यावहारिकता एवं लाभों के कारण विगत 4–5 दशकों में इसका प्रचलन बढ़ रहा है। खाली भूमि न होने पर व्यक्ति गमलों, घर की छतों, ड्रमों या बक्सों आदि में सब्जियाँ उगा रहे हैं।

गृहवाटिका के लाभ – (Advantages of kitchen garden)

(1) परिवार के सदस्यों की आवश्यकता के अनुसार ताजा एवं स्वादिष्ट सब्जियाँ वर्षभर उपलब्ध होती रहती है।

(2) घर के चारों ओर पड़ी खाली भूमि का सदुपयोग होता रहता है।

(3) परिवार के सदस्यों के लिए व्यायाम का अच्छा साधन है।

(4) रसोईघर व स्नानघर के पानी एवं कूड़े करकट का सदुपयोग हो जाता है।

(5) गृह वाटिका मनोरंजन का साधन है।

(6) सब्जियों के साथ फूल एवं फल भी प्राप्त होते हैं।

(7) सब्जी क्रय करने बाजार नहीं जाना पड़ता जिससे समय की बचत होती है।

(8) बाजार की तुलना मे उत्तम गुणवत्ता वाली व सस्ती सब्जियाँ मिलती है।

(9) परिवार के सदस्यों एवं बच्चों को सीखने का अवसर प्राप्त होता है।

(10) सब्जियों के खर्च में बचत होने से परिवार की आय बढ़ती है।

(11) अधिक सब्जियों का उपयोगकरने से खाद्यान्न की बचत होती है।

(12) गृह वटिका की सब्जियों पर कीटनाशक एवं रोग नाशक हानिकारक रसायनों का प्रयोग नहीं होता है।

(13) घर के आस–पास का वातावरण सौन्दर्यपूर्ण एवं स्वच्छ रहता है।

(14) स्वयं द्वारा उगायी सब्जियाँ मनोवैज्ञानिक रूप से स्वादिष्ट लगती है।

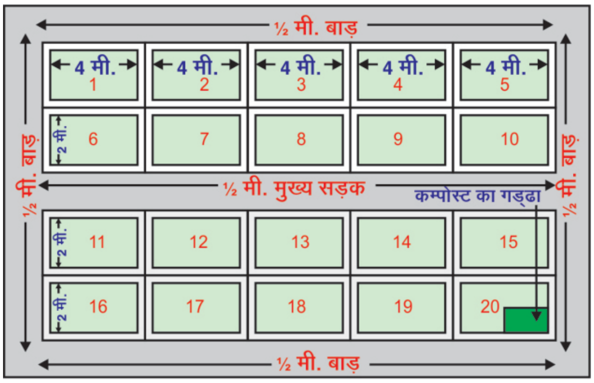

गृह वाटिका का प्रारूप

चित्र–8.1

गृहवाटिका का अभिन्यास (Layout of Kitchen garden) :– गृहवाटिका में फसल प्रबंध के लिए योजनाबद्ध खेती आवश्यक है। मौसम आने के पहले ही बुआई के कार्यक्रम की योजना तैयार कर लेनी चाहिए। इससे प्रत्येक सब्जी के क्षेत्रफल के अनुसार बीज की सही मात्रा, खाद, पानी आदि की जरूरतों का पता लग जाता है ताकि न्यूनतम मेहनत व खर्चे से सब्जियों की अच्छी फसल मिल सके। गृह वाटिका का आकार भूमि की उपलब्धता व परिवार में सदस्यों की संख्या पर निर्भर करता है एक औसत परिवार (5–6 सदस्य) को वर्ष भर सब्जियाँ प्राप्त करने के लिए 25 मीटर X 10 मीटर का क्षेत्रफल प्यप्ति रहता है। गृहवाटिका का अभिरूप स्थान के आकार–प्रकार परिवार की रूचि, भूमि, जलवायु तथा सब्जियों के चयन पर निर्भर करता है। एक बड़ी बेढंगी गृहवाटिका की अपेक्षा उचित ढंग से लगाई गई छोटी गृह वाटिका अच्छी रहती है। गृहवाटिका की उचित देख–रेख के लिए चौड़ाई कम व लम्बाई अधिक रखी जाती है। नमूने के तौर पर एक गृहवाटिका का प्रारूप चित्र संख्या 2.1 में दिया गया है। गृहवाटिका का अभिन्यास करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

1. गृहवाटिका निवास स्थान के समीप होनी चाहिए जिससे खाली समय में परिवार के सदस्य उसकी देखभाल कर सकें।
2. रसोईघर एवं स्नानघर से निकलने वाले पानी का सदुपयोग हो सके।
3. भूमि को उपजाऊ बनाने के लिए जैविक खाद का प्रयोग करना चाहिए।
4. फसल चक्र सिद्धान्तों का पालन करना चाहिए।
5. सब्जियों की बुआई सदैव पंक्तियों में करनी चाहिए।
6. ग्रीष्म व वर्षा ऋतु में बाड़ के साथ बेल वाली (कद्दूवर्गीय) सब्जियों को उगाएं।
7. सर्दी की ऋतु में बाड़ के साथ मटर उगाएं।
8. जड़ वाली सब्जियों मौसम के अनुसार मेंड़ो पर ही उगाएं।
9. कुछ सब्जियों की 2–3 कतारें लगातार 8–10 दिन के अन्तर पर लगाये जिससे अधिक समय तक सब्जियाँ प्राप्त होती रहें।
10. लम्बी अवधि की सब्जियों के मध्य कम अवधि की सब्जियाँ उगाये जैसे– टमाटर व बैंगन के बीच मूली, गाजर आदि।
11. पर्याप्त स्थान उपलब्ध होने पर पपीता, नीबू, अनार, अंगूर, केला आदि फल एवं फूलों के पौधे लगाएं।

सब्जियाँ बोने का समय– गृहवाटिका में वर्ष में तीन बार शाक–सब्जियाँ बोई जा सकती हैं।

(1) **खरीफ की सब्जियाँ** :– इन्हें जून– जुलाई में बोया जाता है। इस समय भिण्डी, मिर्च, बैंगन, लोबिया, अरबी, टमाटर, लौकी, करेला, तोरई, ग्वार आदि की बुआई करते हैं।

(2) **रबी की सब्जियाँ** – इन्हें सितम्बर–अक्टूबर में बोया जाता है। इस समय फूलगोभी, पत्तागोभी, मटर, प्याज, लहसुन, आलू, टमाटर, मूली, गाजर, शलजम, सरसों, मेथी, पालक आदि की बुआई की जा सकती है।

(3) **जायद की सब्जियाँ** :– इन्हें फरवरी–मार्च में बोया जाता है। इस समय टिण्डा, खीरा, ककड़ी, खरबूज, तरबूज,

लौकी, तोरई, भिण्डी, अरबी, सीताफल आदि की बुआई की जा सकती है।

2. व्यावसायिक स्तर पर सब्जियों की खेती – (Commercial Cultivation of Vegetables)

इसमें सब्जी उत्पादन का मुख्य उद्देश्य धनोपार्जन का होता है। इस प्रकार की खेती बड़े क्षेत्रफल पर की जाती है। सब्जियों के उत्पादन को स्थानीय अथवा दूरस्थ बाजारों में बेचा जाता है। बीजों का उत्पादन करके भी आय प्राप्त की जाती है। व्यावसायिक स्तर पर शाकोत्पादन को निम्न भागों में विभक्त किया जाता है–

(अ) मार्केट गार्डनिंग – इसमें उत्पादित सब्जियाँ बाजार में बेची जाती है। इस प्रकार की खेती में सघन फसल चक्र अपनाया जाता है इसलिए यह खेती श्रम प्रधान होती है। इसमें विशेष रूप से फूलगोभी, पत्तागोभी, गाजर, टमाटर, पालक, मेथी, आदि सब्जियाँ उगायी जाती है। आधुनिक मार्केट गार्डनिंग की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) इन फार्मों की भूमि अधिक मूल्यवान होती है।

(2) इन फार्मों की बाजार से अधिकतम दूरी 20–25 किलोमीटर तक हो सकती है।

(3) इस प्रकार के फार्म का क्षेत्रफल सीमित होता है।

(4) बाजार की माँग के अनुसार सब्जियों की गहन खेती करके अधिक उत्पादन किया जाता है।

(5) इन क्षेत्रों में श्रमिकों की माँग मजदूरी अधिक रहती है।

(6) फार्मों पर नवीनतम कृषि तकनीक अपनायी जाती है।

(7) सब्जियों की तुड़ाई प्रायः सुबह के समय करके ताजा सब्जी बाजार में भेजी जाती है।

(8) इन फार्मों पर सिंचाई हेतु जल का प्रबन्ध नितान्त आवश्यक होता है।

(9) सब्जियों के परिवहन पर कम खर्च होता है।

(ब) ट्रक गार्डनिंग :– ट्रक का शाब्दिक अर्थ बाँटना या अदला–बदली है, जो फ्रेन्च भाषा के Traquer से लिया गया है। सब्जी उत्पादन की इस प्रणाली में आलू, प्याज, लहसुन, मटर, अरबी जैसी सब्जियाँ उगायी जाती है, क्योंकि इस प्रकार की सब्जियाँ शीघ्र खराब नहीं होती है। जल्दी खराब होने वाली सब्जियाँ जैसे पालक, मेथी आदि इन फार्मों पर नहीं उगाई जाती हैं। ट्रक गार्डनिंग में उगाई गई सब्जियों को दूर–दूर तक बाजारों में विपणन हेतु भेजा जाता है। इस प्रकार की खेती की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं :–

(1) इन फार्मों का क्षेत्रफल विस्तृत होता है।

(2) इन फार्मों की भूमि सस्ती होती है।

(3) ये फार्म बाजार से अधिक दूरी पर स्थित होते हैं।

(4) सब्जियों के परिवहन पर अधिक खर्च होता है।

(5) इन फार्मों पर ऐसी सब्जियाँ उगायी जाती है जिन्हें दूरस्थ बाजारों में भेजने पर शीघ्र खराब नहीं होती हैं।

(6) इन फार्मों पर मशीनों का प्रयोग अधिक किया जाता है।

(7) वर्ष भर में एक या दो फसलें ही उगायी जाती हैं।

(8) सब्जियाँ प्रायः शाम के समय तोड़कर दूर तक बाजारों में भेजी जाती है।

(9) इन फार्मों पर उगायी गयी सब्जियों का विपणन प्रायः मध्यस्थों द्वारा किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

बहुचनात्मक प्रश्न–

1. निम्न में से फल वाली सब्जी है –

   (अ) आलू (ब) प्याज

   (स) भिण्डी (द) फूलगोभी

2. फूलगोभी का वानस्पतिक कुल है –

   (अ) लिलिएसी (ब) ब्रेसीकेसी

   (स) कुकरविटेसी (द) मालवेसी

3. मार्केट गार्डनिंग के फार्म की बाजार से अधिकतम दूरी होती है –

(अ) 0–5 किमी तक

(ब) 50–70 किमी तक

(स) 100–150 किमी तक

(द) 20–25 किमी तक

4. गृहवाटिका का उद्देश्य होता है –

(अ) परिवार के सदस्यों को निरन्तर ताजा सब्जियाँ उपलब्ध कराना

(ब) अधिक धन कमाना

(स) परिवार के सदस्यों को व्यस्त रखना

(द) सब्जी उत्पादकों से प्रतियोगिता करना

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

5. कन्द वाली किन्हीं दो सब्जियों के उदाहरण दीजिए।
6. लौकी व करेला किस कुल की सब्जियाँ है ?
7. गृह वाटिका किसे कहते हैं ?
8. जायद ऋतु की सब्जियाँ कब बोयी जाती हैं ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

9. ऋतुओं के आधार पर सब्जियों का वर्गीकरण कीजिए।
10. मार्केट गार्डनिंग एवं ट्रक गार्डनिंग में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
11. ट्रक गार्डनिंग की विशेषतायें लिखिए।
12. सब्जियों की खेती के प्रकार लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न–

13. गृह वाटिका के लाभ लिखिए।
14. गृह वाटिका का अभिन्यास करते समय किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
15. वानस्पतिक आधार पर सब्जियों का वर्गीकरण कीजिए।

उत्तरमाला– 1. (स) 2. (ब) 3. (द) 4. (अ)

अध्याय–9
पौधशाला (Nursery)

फल, फूल तथा सब्जी के पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में बहुत अच्छी तरह देखरेख करने की आवश्यकता पड़ती है। फूलों व सब्जियों के बीजों को अत्यन्त छोटे व महँगे होने के कारण सीधे खेत में बोना कठिन होता है क्योंकि प्रारम्भिक अवस्था में इनके नवजात पौधे अधिक कोमल होते है। अतः इन पौधों को गर्मी, सर्दी, तेज हवाओं, अधिक वर्षा, बीमारियों व कीटों से रक्षा करना अत्यन्त आवश्यक होता है। बड़े क्षेत्रफल में इस प्रकार के कोमल पौधों की देखभाल आसानी से करना सम्भव नही हो सकता, इसलिए बीजों को पहले छोटे स्थान पर सघन रूप में उगाया जाता है और जब पौधे कुछ बड़े हो जाते है तब उन पौधों को स्थाई या खेत में रोप दिया जाता है।

परिभाषाः–

1. वह सीमित क्षेत्र, जहाँ छोटे–छोटे तथा महँगे बीजों को सघन रूप में बोकर तथा उगे हुए पौधों को प्रारम्भिक अवस्था में सभी सम्भव सुविधायें प्रदान कर पौधे तैयार किये जाते है, उसे पौधशाला या नर्सरी कहते है।
2. छोटी–छोटी क्यारियों वाला वह क्षेत्र जहाँ अधिक मात्रा में एक साथ बोये गये बीजों से उत्पन्न पौधों की सामूहिक रूप से उस समय तक देखरेख की जाती है, जब तक कि उनको स्थाई स्थान पर स्थानान्तरित नहीं किया जाता, पौधशाला कहलाता है।

महत्वः– पौधशाला में नवजात पौधों की देखरेख उचित ढंग से होती है, जिससे स्वस्थ पौधे तैयार होते है और भविष्य में अच्छा उत्पादन मिलता है। आज सघन खेती (Intensive Cultivation), छोटी कृषि जोत व कुछ अन्य कारणों से पौधशाला का महत्व और अधिक बढ़ जाता है। निम्नलिखित बिन्दुओं से पौधशाला का महत्व स्पष्ट हैः–

1. पौधशाला में पौध तैयार करने में भूमि की बचत होती है।
2. पौधशाला में पौध तैयार करने में बीज कम लगता है।
3. छोटे व हल्के बीजों की खेत में सीधी बुआई करना कठिन होता है लेकिन पौधशाला में आसानी से बुआई व सुरक्षा कर सकते है।
4. पौधशाला में उगे हुए नवजात व कोमल पौध की सीमित क्षेत्र के कारण देखभाल करना आसान रहता है।
5. पौधशाला में पौधो की वृद्धि के लिये सभी अनुकूल परिस्थितियाँ आसानी से प्रदान की जा सकती है।
6. बीजों की बुवाई नर्सरी में करने से मुख्य खेत की तैयारी के लिये अधिक समय मिल जाता है।
7. जिस समय में पौधशाला में पौध तैयार करते हैं उसी समय में खेत में दूसरी फसलें उगी रहती हैं अतः सघन खेती को बढावा मिलता है।
8. कम क्षेत्र (पौधशाला) में पौधों की कीटों, रोगों व प्रतिकूल मौसमी परिस्थितियों से आसानी से सुरक्षा कर सकते हैं।
9. पौधशाला में पौध तैयार कर खेती करने से उत्पादन व्यय कम होता है जिससे प्रति हैक्टर लाभ बढ़ जाता है।
10. व्यवसाय के रूप में पौधशाला में सब्जियों, फूलों व फलों की पौध तैयार कर अच्छा लाभ कमाया जा सकता है।

पौधशाला के लिये स्थान का चुनावः–

पौधशाला के लिये स्थान ऐसा होना चाहिये जहाँ पर नवजात पौधों को अधिक से अधिक आवश्यक सुविधाएँ देना सम्भव हो सके। उसके अलावा पौधशाला केवल स्वयं की आवश्यकता पूर्ति हेतु नये पौधे तैयार करने के लिये ही निर्माण नहीं की जाती अपितु यह एक अच्छा व्यवसाय भी है, जिसमें अनेक प्रकार के पौधे तैयार किये जाते है तथा उन्हें बेचकर अच्छी आमदनी प्राप्त की जाती है। अतः पौधशाला के लिये स्थान का चुनाव करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिएः–

(1) पौधशाला स्थल की स्थिति :– पौधशाला के लिये चुना गया स्थान सामान्य धरातल से कुछ ऊँचा होना चाहिए। जिससे आसपास का पानी पौधशाला में इकठ्ठा नही हो।

(2) मिट्टीः– पौधशाला की सफलता उपलब्ध सुविधाओं, मिट्टी तथा विभिन्न अनुकूल परिस्थितियों पर निर्भर करती है। अतः नर्सरी के लिये, भूमि में निम्नलिखित विशेषताँएहोनी चाहिएः–

(i) भूमि उपजाऊ होनी चाहिये अर्थात् जीवांश पदार्थ व पोषक तत्वों की मात्रा पर्याप्त होनी चाहिए।

(ii) भूमि समतल होनी चाहिए।

(iii) भूमि कंकड़–पत्थर रहित होनी चाहिए।

(iv) भूमि खरपतवार रहित होनी चाहिये। बलुई दोमट व दोमट भूमि पौधों की बढ़वार के लिये उतम होती है। रेतीली या अधिक चिकनी मिट्टी उपयुक्त नहीं है।

(v) भूमि में निचली परतें कठोर नहीं होनी चाहिए।

(3) सिंचाई की सुविधा:– पौधशाला में उगाये गये पौधों के लिये वर्ष भर अर्थात् वर्षा ऋतु में वर्षा की कमी के कारण तथा बाकी दिनों में भी नियमित सिंचाई की आवश्यकता रहती है। पौधशाला में पानी की कमी होते ही कोमल पौधे मुरझाने लगते हैं इसलिये पौधशाला में या नजदीक सिंचाई के लिये स्थाई सुविधा होनी चाहिए। सिंचाई हेतु उपलब्ध पानी सिंचाई के योग्य होना चाहिए।

(4) जल निकास की व्यवस्था:– पौधशाला में कोमल पौधे अधिक नमी के कारण आर्द्रगलन रोग वाइरस जनित रोगों व हानिकारक कीटों से प्रभावित हो जाते है। इसके अलावा अधिक नमी से भूमि में वायु संचार कम हो जाता है तथा मृदा ताप में भी गिरावट आ जाती है। जिससे स्वस्थ पौधे तैयार नहीं हो सकते। इसलिये नर्सरी निर्माण ऐसे स्थान पर करना चाहिये जहाँ जल निकास का उचित प्रबन्ध हो।

(5) यातायात की सुविधा:– नर्सरी में स्वयं के लिये नये पौधे तैयार करने के अलावा यह एक व्यवसाय भी है, इसलिये व्यावसायिक नर्सरी क्रेताओं की पहुँच से दूर नहीं होनी चाहिये। नर्सरी में आने–जाने हेतु आवागमन की अच्छी सुविधा होनी चाहिए। व्यावसायिक पौधशाला के निकट रेल या सड़क यातायात होने से तैयार पौधों की बिक्री अधिक से अधिक हो सकती है।

(6) कार्बनिक खाद की सुविधा:– पौधों की वृद्धि के लिये संतुलित पोषक तत्वों की आवश्यकता होती हैं। पौधों को पोषक तत्व विभिन्न कार्बनिक खादों से ही संतुलित मात्रा में प्राप्त होते है। इसलिये पौधशाला ऐसे स्थान पर निर्माण करनी चाहिये जहाँ आसानी से, कम कीमत पर तथा पर्याप्त मात्रा में कार्बनिक खाद मिल सके।

(7) दैनिक व स्थानीय मजदूरी की सुविधा:– पौधशाला में वर्षभर विभिन्न कार्यों हेतु समय–समय पर कम या अधिक संख्या में मजदूरों की आवश्यकता पड़ती रहती है। अतः पौधशाला ऐसे क्षेत्रों के नजदीक स्थापित करनी चाहिये, जहाँ दैनिक व स्थानीय मजदूरों की संख्या पर्याप्त हो तथा आसानी से उपलब्ध हो।

(8) अन्य बातें:–

(i) पौधशाला सुरक्षित स्थान पर स्थापित करनी चाहिये ताकि आवारा पशु पौध व पौधों को नुकसान न पहुँचा सके। इसके लिये पौधशाला के चारों ओर बाड़ या काँटेदार तारों की व्यवस्था होनी चाहिए।

(ii) पौधशाला के नजदीक बड़ी–बड़ी फैक्ट्रियाँ नहीं होनी चाहिये क्योंकि उनसे निकलने वाला धुआं पौधों की वृद्धि के लिये हानिकारक है।

(iii) पौधशाला किसी बड़ी पहाड़ी या बडी–बड़ी हवेली या काफी बड़े वृक्षों के पश्चिम में नहीं बनानी चाहिये, क्योंकि ये प्रातःकालीन धूप को रोकती हैं इसका सीधा प्रभाव पौध व पौधों की वृद्धि पर पड़ता है।

(iv) पौधशाला में फलों व सजावटी पौधों से नये पौधे, प्रवर्धन की विभिन्न विधियों द्वारा तैयार करने का कार्य प्रशिक्षित बागवान या माली ही कर सकता है, अतः जहाँ पौधशाला स्थापित करनी हो वहाँ बागवान या माली आसानी से उपलब्ध होना चाहिये और उसका निवास स्थान पौधशाला के निकट ही होना चाहिये ताकि देख–रेख आसानी से हो सके।

(v) सजावटी पौधों की नर्सरी के लिये कुछ छायादार स्थान भी पौधशाला में होना चाहिये।

खेत की तैयारी एवं पौध तैयार करना

(अ) पौधशाला या खेत की तैयारी :– पौधशाला का आकार छोटा हो या बड़ा, उसमें स्वस्थ पौधे तैयार करने के लिये उसकी व्यवस्थित तैयारी बहुत जरूरी होती है। ताकि स्वयं व क्रेताओं की आवश्यकताओं के अनुसार स्वस्थ व निरोग पौध प्राप्त हो सके। व्यवस्थित तैयारी के लिये निम्नलिखित बिन्दुओं के अनुसार कार्य करना चाहिये।

(1) पौधशाला की घेराबन्दी करना।

(2) काम में आने वाले यंत्र व उपकरणों की व्यवस्था करना।

(3) सिंचाई की स्थाई व्यवस्था करना।

(4) पौधशाला की योजना तैयार करना।

(5) पौधशाला की भूमि को तैयार करना।

(1) घेराबन्दी करना (Fencing) – पौधशाला में तैयार किये जाने वाले कीमती पौधों की रक्षा करने तथा बाहरी व्यक्तियों का पौधशाला में आवागमन रोकने के लिये सबसे पहले चुनाव किये गये स्थान की घेराबन्दी कर देनी चाहिये। घेराबन्दी पक्की ईटों की दीवार बनाकर की जा सकती है, या फिर लोहे के ऐंगल या सीमेंट कंकरीट से तैयार खम्भों पर 4–5 पंक्तियों में कंटीले तारों की बाड़ भी बनाई जा सकती है। इसके अलावा काँटेवाले पौधे जैसे जंगल–जलेबी, कीकर, बबूल इत्यादि की बाड़ भी बनाई जा सकती है। कुछ स्थानों पर बेर की सूखी झाड़ियों की बाड़ बनाई जाती है। अगर काँटेदार तारों के साथ–साथ उपरोक्त बाड़ वाले पौधे भी लगा दिये जाये जो अच्छी घेराबन्दी हो जाती हैं।

(2) यंत्र व उपकरण – नर्सरी में विभिन्न कार्य करने हेतु विभिन्न प्रकार के यंत्रों व उपकरणों की लगातार आवश्यकता

रहती है। उनकी समुचित व्यवस्था कर लेना चाहिये। नर्सरी में काम आने वाले मुख्य यन्त्र व उपकरण निम्नलिखित हैं –

1. फावड़ा	2. कुदाली	3. खुरपी
4. बेलचा व गैंती	5. हो एण्ड रैक	6. हैण्ड फोर्क
7 डिबलर	8 कलिकायन चाकू	
9. हैरो व हैण्ड कल्टीवेटर	10. ट्रॉवेल	
11. हँसिया या दराँती	12. सिकेटियर	
14. उपरोपण चाकू		
15. झारा व फव्वारा	16. कृन्तन आरी	
17. डस्टर (भुरकाव यंत्र)	18. स्प्रेयर (छिड़काव यंत्र)	

(3) सिंचाई व्यवस्था – पौधशाला में वर्ष भर विभिन्न फूलों, फलों तथा सब्जियों की पौध तैयार कर अधिक से अधिक लाभ अर्जित करने का उद्देश्य रहना चाहिये। उसके लिये पूरे वर्ष नियमित सिंचाई की जरूरत रहती है, अतः पौधों व पौध के लिये पानी की कोई स्थाई व्यवस्था होनी चाहिए। बड़े–बड़े शहरों के आस–पास अस्थाई व्यवस्था से पौधशाला की आवश्यकताओं की पूर्ण आपूर्ति नहीं हो सकेगी। सिंचाई के लिये ट्यूबवैल अथवा कुएँ का निर्माण कराया जा सकता है। इसके अलावा पानी के संग्रहण हेतु एक बड़ी हौद या टंकी का निर्माण करना भी आवश्यक होगा, जिससे पौधों को समय–समय पर आवश्यकतानुसार पानी उपलब्ध कराया जा सके।

बड़ी पौधशाला में सिंचाई का कार्य स्प्रिंकलर द्वारा किया जा सकता है। पैतृक वृक्षों तथा पौध स्थानान्तरित क्यारियों में नालियों द्वारा सिंचाई की व्यवस्था करनी चाहिये। जिन क्यारियों तथा गमलों में बीज बोये गये है उनमें पानी झारे या फव्वारा द्वारा ही दिया जाना चाहिए।

(4) पौधशाला की योजना – योजना तैयार किये बिना कोई भी कार्य सही ढंग से किया जाना कभी भी सम्भव नहीं हो सकता, इस बात को ध्यान में रखते हुए पौधशाला में पौध तैयार करने से पहले उसकी एक पूर्ण योजना बनानी चाहिये। एक अच्छी पौधशाला में पौध तैयार करने से पहले उसकी एक पूर्ण योजना बनानी चाहिये। एक अच्छी पौधशाला निर्माण करने के लिये सभी बातों को ध्यान में रखते हुए आवश्यकतानुसार योजना बनाई जानी चाहिये। एक आदर्श पौधशाला का निम्नलिखित खण्डों में विभाजन करना चाहिए –

1. कार्यालय एवं आवास (Office cum residence)
2. स्थाई सिंचाई खण्ड (Permanent irrigation source)
3. खाद भण्डारण क्षेत्र (Manure storage)
4. बीज बोने की क्यारियाँ (Seed beds)
5. स्थानान्तरण क्यारियाँ (Transplanting beds)
6. मातृ वृक्ष खण्ड (Mother plant's block)
7. गमले व बीज पात्र क्षेत्र (Pot yard and seed pan area)
8. विशेष इकाई क्षेत्र (Special unit area)

कार्यालय एवं निरीक्षण आवास – पौधशाला से अच्छा लाभ प्राप्त करने की दृष्टि से इस व्यापार की देखरेख व सुव्यवस्थित करने के लिए मालिक या व्यवस्थापक को पौधशाला में रहना अत्यन्त आवश्यक होता है। यह आवास इनके उपयोग के काम आते हैं, इन्हें योजनानुसार बनाया जाना चाहिए।

सिंचाई खण्ड – पौधशाला में स्वस्थ व निरोग पौध तैयार करने के लिये जीवांश खाद की आवश्यकता समय–समय पर रहती है इस लिये खाद भण्डारण पौधशाला में ही आवश्यक होता है। यह क्षेत्र इसी उपयोग में लेनी चाहिए।

बीज बोने की क्यारियाँ – पौध तैयार करने के लिये सबसे पहले बीज इन्हीं क्यारियों में बोया जाता है। ये क्यारियाँ लगभग एक मीटर चौड़ी तथा तीन मीटर लम्बी तैयार करनी चाहिए। वर्षा ऋतु में बीज बोने के लिये इन क्यारियों को पौधशाला की भूमि से 10–15 सेमी ऊँची बनाये, जिससे जल निकास आसानी से हो सकेगा तथा पौध को बीमारियों से बचाया जा सकेगा। इन क्यारियों में आवश्यकता से अधिक जल रहने से पौध में आर्द्र गलन रोग की सम्भावना बढ़ जाती हैं।

स्थानान्तरण क्यारियाँ – इन क्यारियों को आकार में, बीज क्यारियों से बड़ा बनाया जाता है। बीज क्यारियों में तैयार हुई पौध इन क्यारियों में स्थानान्तरित करके बेचने हेतु रखा जाता है। इन क्यारियों में पानी देने की व्यवस्था नालियों द्वारा की जाती हैं।

मातृ वृक्ष खण्ड – इस क्षेत्र में पौधशाला में तैयार किये जाने वाले पौधों की विभिन्न जातियों के पैतृक वृक्षों को तैयार किया जाता है। इन्हीं वृक्षों से संवर्धन के लिये बीज तथा सांकुर डालियाँ ली जाती है। अच्छे किस्म के पौधे तैयार करने के लिये, अच्छे किस्म के पैतृक पौधे पौधशाला में होना बहुत जरूरी है।

गमले व बीज बोने के पात्रों का क्षेत्र – पौधशाला में कुछ मंहगे बीज गमलों या बीज पात्रों में बोकर पौध तैयार करने पड़ते हैं। अनेकों पौधे गमले में ही उगाये जाते है या पौधे तैयार करने के बाद उनको गमलों में स्थानान्तरित या रोपकर बेचा जाता हैं। इस प्रकार के बीज पात्रों व तैयार गमलों को इसी क्षेत्र में रखा जाना चाहिए।

विशेष इकाई क्षेत्र – यदि आर्थिक स्थिति अच्छी हो और बहुत से कीमती पौधे व वृक्ष तैयार करने हों तो काँच के घर, छायादार घर, गर्म क्यारियाँ, शीतघर तथा फुहार (मिस्ट यूनिट) इत्यादि विशेष इकाईयों का निर्माण पौधशाला में कर सकते हैं। इन इकाईयों की सहायता से और अधिक पौधे तैयार कर आर्थिक लाभ कमाया जा सकता है।

(5) भूमि की तैयारी :– पौधशाला का क्षेत्रफल अगर बड़ा हो तो सबसे पहले मिट्टी पलटने वाले हल से 1–2 जुताई करने के बाद 2–3 जुताइयाँ देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए। जहाँ हल नहीं चलाया जा सकता, उस क्षेत्र की कस्सी या फावड़ा से 2–3 बार गहरी खुदाई करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई या खुदाई के बाद घास–फूस तथा कंकड–पत्थर के टुकड़ों को अच्छी तरह चुनकर बाहर निकाल देना चाहिए। जुताई करने के बाद खेत में ढेले हो तो मिट्टी को भुरभुरा बनाने के लिये पाटा या सुहागा चलाना चाहिए। भूमि अगर कुछ ऊँची–नीची दिखाई दे तो कराहा या लेवलर से भूमि समतल बना लेनी चाहिए। छोटे क्षेत्रफल में यह कार्य लकड़ी की फट्टी से किया जा सकता है।

पौधशाला की भूमि में बीजों की बुआई से लगभग 1 से 1.5 माह पूर्व 20–25 किलोग्राम अच्छी सड़ी हुई, खरपतवारों के बीजों से रहित, गोबर या कम्पोस्ट खाद प्रति 10 वर्गमीटर क्षेत्रफल की दर से समान रूप से फैलाकर मिट्टी में मिला देनी चाहिए तथा भूमि को पुनः समतल कर देना चाहिए।

पौधशाला की मृदा को निर्जमीकृत करने के लिये 1 प्रतिशत फार्मेलीन का घोल 4.5–5 लीटर प्रति वर्गमीटर भूमि की दर से डालकर तुरन्त पॉलीथीन से 2–3 दिनों तक ढककर रखना चाहिये। जमीन को 15 सेमी तक फार्मेलीन घोल संतृप्त करना चाहिए। ऐसा करने से भूमि के अन्दर व्याप्त व्याधियाँ उत्पन्न करने वाले जीवाणु तथा कवक नष्ट हो जाते हैं।

नर्सरी की भूमि में दीमक व अन्य भूमिगत कीटों की रोकथाम के लिये क्लोरपायरीफॉस चूर्ण या नीम की पतियों की खाद भूमि की तैयारी के समय ही मिला देनी चाहिए।

इस प्रकार तैयार किये गये क्षेत्र को योजनानुसार छोटी–छोटी क्यारियों में विभाजित कर लेना चाहिए। क्यारियों की चौड़ाई 1–1.5 मीटर से अधिक नहीं रखनी चाहिए। उससे निराई–गुड़ाई करने में आसानी रहती है। क्यारियों की लम्बाई (3–5 मीटर) सुविधानुसार रखी जा सकती है।

पौध तैयार करना :–

पौध तैयार करने हेतु विभिन्न पौधों के बीच प्रसिद्ध एवं विश्वसनीय बीज उत्पादकों से ही खरीदने चाहिए। सरकारी क्षेत्र में उत्पादित बीज अधिक विश्वसनीय होते हैं बाद में बीज स्वयं द्वारा भी तैयार किया जा सकता है। पौध क्रेताओं की आवश्यकता के समय उपलब्ध कराई जानी चाहिए। अतः बीज की व्यवस्था पौध माँग से 1–2 माह पहले ही अवश्य कर लेनी चाहिए।

पौधशाला में बीजों की बुआई निम्नलिखित तरीकों से की जा सकती हैं :–

(i) छिटककर बुआई करना – अत्यन्त छोटे या बारीक बीजों जैसे मौसमी फूलों के बीज तथा गोभी वर्गीय सब्जियों के बीजों को बराबर या दुगुनी मात्रा में मिट्टी या राख के साथ मिलाकर पौध क्यारियों में समान रूप से बिखेर देना चाहिए। बीजों को सड़ी तथा छनी हुई गोबर की खाद या राख मिलाकर, इसकी पतली परत से ढक देना चाहिए। ढकने के बाद सिंचाई फव्वारे या झारे से करनी चाहिए।

(ii) लाइनों या पंक्तियों में बुआई करना – कुछ फल व सब्जियां जैसे पपीता, सन्तरा, अमरूद, टमाटर, बैंगन, प्याज, मिर्च इत्यादि के बीजों को छिटकवाँ विधि के अलावा पंक्तियों में भी बोया जा सकता है। बीजों को पंक्तियों में 5 से 6 सेमी. की दूरी रखते हुए 1/2 से 1 सेमी. गहरा बोना चाहिये। फलों व अन्य बड़े आकार के बीजों को 4 से 5 सेमी गहरा बोना चाहिए।

(iii) चोबकर बुआई करना – फलो के बीजों को तैयार क्यारियों या पॉलीथीन की थैलियों में चोबकर भी बोया जा सकता हैं।

फूल, शाक तथा फलों की पौध तैयार करने हेतु विभिन्न क्रियाएँ निम्नानुसार की जाती है :–

(1) फूलों की पौध तैयार करना – फूलों की पौध तैयार करने के लिये पौधशाला के क्षेत्र में ऊँचें व छायादार स्थान की क्यारियाँ काम में ली जाती है इसके लिये आमतौर पर छोटी–छोटी क्यारियाँ जिनकी चौड़ाई 1 मीटर, लम्बाई 1.5 मीटर व 10–15 सेमी. ऊँची उठी हुई बनानी चाहिए। प्रत्येक क्यारी में 2–5 किलोग्राम खाद मिला देते है आजकल पौध क्यारियों में वर्मी कम्पोस्ट का प्रयोग अधिक किया जा रहा है क्योंकि इससे छोटे पौधों को आवश्यक पोषक तत्व जल्दी सुलभ हो जाते हैं।

इस प्रकार तैयार क्यारियों में फूलों के बीजों को दुगनी मात्रा में मिट्टी या राख मिलाकर समान रूप से छिटककर ऊपर से छनी हुई खाद व मिट्टी के मिश्रण या राख की पतली परत बुरक कर ढक देते हैं। बड़े आकार के बीजों जैसे डहेलिया, सूरजमुखी आदि के बीजों को बोने से पूर्व एग्रोसन जी.एन.या बावेस्टिन की 2–3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बोने से आर्द्रगलन की बीमारी नहीं लगती है।

बीजों के अंकुरण होने से पहले प्रतिदिन सांयकाल में फव्वारा या झारे से हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए। बीजों के अंकुरण के बाद मौसम के अनुसार सिंचाई का अन्तर बढ़ाया जा सकता है। जब पौध 2 सप्ताह की हो जाये, उस समय क्यारियों में उगे हुए खरपतवारों को हाथ से निकाल देना चाहिए तथा पतले फरवाली खुरपी या कील से गुड़ाई भी करनी चाहिए।

शाकों की पौध तैयार करना – टमाटर, बैगन, मिर्च, प्याज, गोभी वर्गीय सब्जियाँ इत्यादि की पौध तैयार करके ही रोपाई की जाती है। इन सब्जियों की पौध तैयार करने के लिये पौधशाला में 20–25 किलोग्राम अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद की कम्पोस्ट प्रति 10 वर्गमीटर क्षेत्र के हिसाब से मिलाकर, 1 मीटर चौड़ी व 2–3 मीटर लम्बी क्यारियाँ बना लेनी चाहिए। वर्मी कम्पोस्ट का

उपयोग करने से बीजो का अंकुरण व पौधों की बढ़वार भी अच्छी होती है। बरसात के मौसम में धरातल से उठी हुई क्यारियाँ तैयार करनी चाहिए।

बीजों को बुवाई से पूर्व कवकनाशी रसायन एग्रोसन जी. एन., थायरम 2–3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से उपचारित कर लेना चाहिए। इससे पौध में आर्द्रगलन (Damping off of Seedlings) बीमारी का प्रकोप नहीं होता ।

इस प्रकार उपचारित बीजों को बराबर मात्रा में मिट्टी या राख के साथ मिलाकर क्यारियों में छिटककर ऊपर से मिट्टी व खाद के मिश्रण की बारीक परत से ढक देना चाहिये। बीजों को पंक्तियों में बोना अधिक लाभप्रद रहता है। उसके लिये बीजों को पौध की बढ़वार के अनुसार 6–10 सेमी की दूरी पर लाइनों में 1 से 1.5 सेमी गहराई पर बोना चाहिए। इसके बाद क्यारियों को सूखी घास से ढक कर, तुरन्त झारे या फुहारे से सिंचाई कर देना चाहिए।

बीजों के अंकुरण तक रोजना सुबह तथा सांय को झारे या फुहारे से हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए। बीजों के अंकुरण के बाद सूखी घास को क्यारियों से हटा दें। अंकुरण के बाद सिंचाई की अवधि बढ़ाई जा सकती है। जब पौधे थोड़े बड़े हो जायें उस समय क्यारियों में उगे हुए खरपतवारों को हाथ से ध्यानपूर्वक निकाल देना चाहिए तथा बारीक फर वाली खुरपी से हल्की गुड़ाई भी कर देना चाहिए।

कीटों व रोगों से बचाव हेतु उपयुक्त कीटनाशी या कवकनाशियों का छिड़काव करना चाहिये। सर्दी में पौध को पाले से बचाव हेतु सांयकाल में क्यारियों को पॉलीथीन की चादर से ढक दें।

टमाटर, बैंगन, मिर्च, फूल गोभी, पत्ता गोभी इत्यादि की पौध 4–6 सप्ताह तथा प्याज की पौध 6–8 सप्ताह में प्रतिरोपण योग्य हो जाती हैं।

3 फलों की पौध तैयार करना – फलों के पौधे विभिन्न वंशवर्धी विधियों द्वारा तैयार किये जाते हैं। पपीता, फालसा, बेर व आम की बीजू किस्मों का बीजों द्वारा प्रवर्धन किया जाता है किन्तु अधिकतर फलों का प्रवर्धन अलैंगिक विधियों जैसे कलम, लेयरिंग, ग्राफ्टिंग एवं कालिकायन द्वारा किया जाता है। ग्राफ्टिंग व कलिकायन द्वारा प्रवर्धन में उपयोग आने वाला मूलवृन्त बीज द्वारा ही तैयार करते हैं।

फलों की पौध पौधशाला की क्यारियों के अलावा पॉलीथीन की थैलियों में भी तैयार की जा सकती हैं। पपीता, अनार एवं फालसा की पौध पौधशाला की क्यारियों के साथ–साथ पॉलीथीन की थैलियों में खाद व मिट्टी का मिश्रण भर कर तैयार कर सकते हैं। क्यारियों में फलों के पौधे तैयार करना हो तो क्यारियों की 2–3 बार गहरी जुताई या खुदाई करके घास–फूस तथा कंकड़–पत्थर सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट या वर्मी कम्पोस्ट अच्छी तरह मिलाकर क्यारियों को समतल कर लेना चाहिए।

पॉलीथीन की थैलियों में पौध तैयार करने के लिये लम्बे आकार की पॉलीथीन थैलियों का उपयोग करना चाहिए। वर्षा ऋतु में थैलियों को खाद व मिट्टी के मिश्रण से पूर्णरूप से भर देना चाहिये किन्तु शरद व ग्रीष्म ऋतु में थैलियों के ऊपर का 2–3 सेमी भाग खाली रखना चाहिए।

इस प्रकार तैयार क्यारियों या थैलियों में विभिन्न फलों के बीजों की बुवाई जून–जुलाई या फरवरी–मार्च के माह में

विभिन्न शाकों की पौध तैयार करने के लिये पौधशाला का क्षेत्रफल, बीज की मात्रा तथा बुवाई का समय –

क.सं.	शाक का नाम	पौधशाला क्षेत्रफल (प्र.हे.बु. हेतु)	बीज की मात्रा प्रति हेक्टेयर	बुवाई का समय
1	टमाटर	100–125 वर्ग मीटर	350–450 ग्रा.	जून–जुलाई (अगेती) सितम्बर–अक्टूबर (मध्यम) मार्च–अप्रैल (पछेती)
2	बैंगन	125–150 वर्ग मीटर	375–500 ग्रा.	जून–जुलाई अक्टूबर–नवम्बर फरवरी–मार्च
3	मिर्च	150–200 वर्ग मीटर	1–1.5 कि.ग्रा.	जून–जुलाई नवम्बर–दिसम्बर मार्च–अप्रैल (शिमला मिर्च) अगस्त व नवम्बर
4	फूल गोभी	200–250 वर्ग मीटर	600–700 ग्रा. 400–500 ग्रा. 375–450 ग्रा.	मई–जून (अगेती) जुलाई–अगस्त (मध्यम) सितम्बर–अक्टूबर (पछेती)
5	पत्ता गोभी या बन्द गोभी	200–250 वर्ग मीटर	600–700 ग्रा. 400–500 ग्रा.	अगस्त–सितम्बर (अगेती) सितम्बर–अक्टूबर (पछेती)
6	प्याज	500 वर्ग मीटर	8–10 कि.ग्रा.	अक्टूबर–नवम्बर

करनी चाहिए। बेर जैसे अधिक कठोर बीजों के ऊपरी कठोर छिलके को बोने से पहले तोड़कर अलग कर देना चाहिए। अमरूद के बीजों को बुआई से पहले 4–5 मिनट तक उबलते पानी में या हल्के सल्फ्यूरिक अम्ल में डालकर उपचारित किया जाता है ताकि अंकुरण अच्छा हो। पपीता, आम, अनार आदि के बीजों को सीधा ही बोया जाता है।

आम,बेर आदि के बीजो को 30 सेमी व पपीता के बीजों को पौधशाला में 2–3 सेमी की दूरी पर लाइनों में बोया जाना चाहिये। फलों के छोटे बीजों को 1–2 सेमी गहरा तथा बड़े बीजों को 4–5 सेमी गहरा बोया जाता है। पॉलीथीन थैलियों में प्रत्येक थैली में एक बीज बोना चाहिए।

पपीते के पौधे लगभग दो सप्ताह के होने के बाद क्यारियों में उगे हुए खरपतवारों को खुरपी से निकाल देना चाहिए। अन्य फलों के पौधों में भी समय–समय पर खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए। क्यारियों या थैलियों में पानी की कमी होने पर झारे या फुहारे से नियमित सिंचाई करते रहना चाहिए। आम, बेर, आंवला तथा अमरूद के पौधे 3 माह की आयु के हो जाने पर उन्हें बड़ी पॉलीथीन थैली, गमले या दूसरी स्थानान्तरण क्यारियों में प्रतिरोपित कर देना चाहिए। इन पौधो को साधारणतया एक वर्ष तक इन क्यारियों में रखा जाता हैं। पाले से बचाव के लिये दिसम्बर–जनवरी माह में पौधशाला के ऊपर सरकण्डे या घास–फूस का छप्पर या पॉलीथीन की चादर से ढकने की व्यवस्था कर देनी चाहिये। कीटों तथा रोगों से बचाव हेतु उपयुक्त कीटनाशी व कवकनाशियों का छिड़काव करना चाहिए।

पपीते के पौधों के अलावा अन्य सभी फलो के पौधे 1 वर्ष की आयु में स्थाई स्थान (बाग)पर लगाने योग्य हो जाते है जबकि पपीते के पौधे केवल 2 माह की आयु में ही प्रतिरोपण योग्य हो जाते हैं।

देखभाल एवं पौध प्रतिरोपण

देखभाल – स्वस्थ व निरोग पौध तैयार करने के लिए बीजों की बुवाई तथा इनके अंकुरण के बाद विशेष देखभाल की जानी चाहिए। अगर सही देखभाल नहीं होती है तो अधिकतर पौधे कमजोर रह जाते है। कमजोर पौधे खेत में प्रतिरोपण करने से उनकी वृद्धि बहुत धीमी गति से होती है और उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता हैं। देखभाल में निम्नलिखित क्रियाओं का विशेष ध्यान रखना चाहिए–

1. **सिंचाई :–** पौधशाला क्षेत्र में बीजों की बुवाई के बाद वर्षा ऋतु में वर्षा के अभाव में तथा शरद व ग्रीष्म ऋतु में अंकुरण से पहले प्रतिदिन सांयकाल महीन फुहारे या झारे से सिंचाई करना चाहिए। अंकुरण के बाद मौसम के अनुसार एक या दो दिन के अन्तर पर सिंचाई की जानी चाहिए। पौधघर में कभी भी प्रवाह विधि से तथा अधिक सिंचाई नहीं करनी चाहिए।
2. **निराई गुड़ाई –** जब पौध 10–15 दिनों की हो जाए, उस समय पौधघर क्षेत्र में उगे हुए खरपतवारों को हाथ से अथवा पतली फर वाली खुरपी से निकाल देना चाहिए। पौध क्यारियों में समय–समय पर हल्की गुड़ाई भी करनी चाहिए।
3. **पौध संरक्षण –** नवजात अंकुरित पौधों को तेज धूप या पाला आदि से बचाने के लिये पौधघर में उचित प्रबन्ध करना चाहिए। यदि पौधे पीले व कमजोर दिखाई दें तो यूरिया का 0.1 से 0.5 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। कोमल पौधों को कीटों व रोगों से बचाने के लिये उपयुक्त कीटनाशी रसायन जैसे मैलाथियान तथा कवकनाशियों जैसे डायथेन एम–45 या ब्लाइटॉक्स 50 का 1 ग्राम प्रति लीटर जल में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

पौध प्रतिरोपण – " पौधशाला क्षेत्र से स्वस्थ व निरोग पौधों को सावधानीपूर्वक निकालकर दूसरे स्थान अर्थात् खेत में लगाने को पौध प्रतिरोपण कहते हैं।"

पौधशाला में विभिन्न प्रकार के पौधे तैयार करने के बाद उन्हें सही तरीके से निकालना तथा दूर के बागों या अन्य स्थानों पर ले जाने के लिये पैकिंग करना आवश्यक होता है ताकि पौधे रोपाई के पश्चात् स्वस्थ बने रहें और सुचारू रूप से वृद्धि एवं फलन कर सकें। फूल व शाक की पौध कोमल तथा तीव्र रूप से बढने वाली होती है। इसलिये इनको 'कच्ची पौध' कहते हैं। इन पौधों को निकालते समय कुछ पोषक जड़े टूट भी जाये तो वे शीघ्र ही पुनः बन जाती है, क्योंकि उनकी कोशिकाएँ तीव्र गति से द्विगुणित होती हैं। इस कारण इनकी पौध बिना मिट्टी के निकाली जाती है। पौध निकालने के एक घण्टा पहले पौध क्यारियों में झारे से हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। तत्पश्चात् पौध को खुरपी या ट्रावेल की सहायता से कुछ गहरा खोदकर बिना साथ लगी मिट्टी के निकाल लेना चाहिए। निकालते समय पोषक जड़ों की क्षति कम से कम हो, इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए। निकाली गई पौध को 1 प्रतिशत नत्रजन युक्त पानी में रखना चाहिए। खेत में लगने से पूर्व पौध को छायादार स्थान पर रखें। अगर पौध को रोपण हेतु बाहर भेजना है तो उनकी जड़ों पर गीली स्फैगनम मॉस या पत्ती की खाद युक्त मिट्टी लपेट देनी चाहिए, और जब तक पौध की रोपाई नहीं हो जाती, कभी–कभी हल्का पानी छिड़कते रहना चाहिए।

फलों या बहुवर्षीय पौधों का निकालना व पैकिंग करना – बहुवर्षीय अलंकारी पौधे तथा फल वृक्ष धीमी गति से वृद्धि करने वाले होते हैं और इन पौधों की जड़ें भी धीमी गति से बढ़ती है। पौधों को पौधशाला से कितनी भी सावधानी से निकाला जाये, फिर भी उनकी जड़ो का क्षय कुछ न कुछ अवश्य हो जाता हैं।

जिसके कारण पौधों को आघात पहुंचना स्वाभाविक है। बहुवर्षीय पौधों में पुनः नई जड़े बनने में काफी समय लगता हैं अतः इन पौधों को भूमि से निकालते समय विशेष सावधानी रखनी चाहिए।

सदाबहार पौधों का स्थानान्तरण वर्षा ऋतु या बसन्त ऋतु में किया जाता है इस समय इन पौधों में सबसे अधिक नई जड़ो का निर्माण होता है। ये जड़े कोमल व पतली होने के कारण शीघ्र टूट सकती है, अतः इन पौधों को कुछ मिट्टी के पिण्ड सहित भूमि से निकालना चाहिये। पौधे के साथ निकाली गई मिट्टी पौधे के आकार तथा वृद्धि पर निर्भर करती हैं। अधिक गीली या अधिक सूखी भूमि से पौधे निकालने पर जड़े टूटने का भय अधिक रहता है। इसलिए भूमि में हल्की नमी भी होनी चाहिए। जड़ो से लगी मिट्टी के पिण्ड का आकार गमले की तरह ऊपर से चौड़ा तथा नीचे की ओर धीरे–धीरे पतला होना चाहिए। स्थानीय रोपाई के लिये उसी स्थिति में पौधों को गड्ढों में लगाना चाहिए। यदि पौधों को बाहर दूर स्थानों पर भेजना है तो पौधे के साथ लगी मिट्टी को उँगलियों की सहायता से दबा करके पिण्ड को "मॉसघास" से लपेट कर सुतली या मूंज से पिण्ड सहित पौधे को अच्छी प्रकार बाँध देते हैं। मिट्टी के पिण्ड को टूटने तथा पौधे को सूखने से बचाने के लिए पॉलीथीन की शीट या सरकण्डे की पत्तियों या पुआल का उपयोग भी किया जा सकता हैं।

पौधों को भली प्रकार बाँधने के पश्चात् टोकरी या लकड़ी की पेटियों में रखकर पुनः मूंज, सूतली इत्यादि से बाँधना चाहिये ताकि दूर स्थानो पर पौधें सुरक्षित पहुँच सकें। पॉलीथीन थैलियों में तैयार किये गये पौधों को दूरस्थ स्थानों पर भेजने में आसानी रहती है।

पतझड़ी पौधों को साधारणतया सर्दियों में जब वे सुषुप्तावस्था में होते है, लगाया जाता है। गुलाब, अंगूर, फालसा इत्यादि पौधे पतझड़ी होते हैं। इन पौधों को सर्दियों में बिना मिट्टी के पिण्ड के निकालकर, पॉलीथीन की थैलियों में बाँधकर रोपण हेतु दूर के स्थानों पर भेज दिया जाता है। इन पौधों की बागों में रोपाई बिना मिट्टी के ही की जाती है।

रोपाई – पौध का मुख्य खेत में रोपाई का कार्य उनकी किस्म के अनुसार उचित समय करना चाहिए। स्वस्थ पौधे को ही खेत में लगाना चाहिए। कमजोर तथा बहुत छोटी पौध को खेत में नहीं लगाना चाहिए। फूल व शाकों की तीन–चार पत्तियाँ निकल आये तब उनका प्रतिरोपण कर देना चाहिए। पौध अधिक समय तक पौधशाला में रहने से पौध कमजोर रह जाते है तथा उनमें समय से पहले ही फूल आने लगते हैं। रोपाई का कार्य सामान्यतया सांयकाल के समय ही करना चाहिए और तुरन्त सिंचाई कर देनी चाहिए। ताकि रात्रि के पौधों में वाष्पोत्सर्जन क्रिया न होने से उनमें जल की कमी की सम्भावनाएँ कम हो जाती हैं। रोपाई करते समय पौधों व लाइनों के बीच की दूरी कम ज्यादा नहीं होना चाहिए। पौध रोपाई के तुरन्त बाद सिंचाई करना अतिआवश्यक है। खेत का प्रतिदिन निरीक्षण कर, कमजोर या मरे हुए पौधों के स्थान पर नई पौध का प्रतिरोपण अवश्य कर देना चाहिए।

सावधानियाँ –

पौधशाला निर्माण, स्वस्थ व निरोग पौध तैयार करने तथा पौध प्रतिरोपण में निम्नलिखित सावधानियाँ रखनी चाहिए –

1. पौधशाला के लिये चुना गया स्थान सामान्य धरातल से नीचा नहीं होना चाहिए।
2. पौधशाला की भूमि में कठोर परत या कंकड़–पत्थर नहीं होने चाहिए।
3. भूमि अम्लीय या क्षारीय नहीं होनी चाहिए।
4. पौधशाला में पौध क्यारियों की चौड़ाई 1–1.5 मीटर से अधिक नहीं रखनी चाहिए।
5. पौध क्यारियों में किसी भी स्थान पर अधिक पानी नहीं ठहरना चाहिए।
6. वर्षा ऋतु में धरातल से उठी हुई क्यारियाँ बनाकर पौध तैयार करनी चाहिए।
7. पौध तैयार करने हेतु यदि बीज स्वयं द्वारा तैयार नहीं किया गया हो तो सरकारी क्षेत्र में उत्पादित बीज या प्रसिद्ध बीज उत्पादकों से ही बीज क्रय करना चाहिए।
8. बीजों को बुआई से पूर्व कवकनाशी रसायन की उचित मात्रा से अवश्य उपारित करना चाहिए।
9. पौधशाला में बीज बुआई के तुरन्त बाद व अंकुरण तक रोजना सुबह–शाम झारे से हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।
10. पौध को तेज धूप, पाला, कीट तथा रोगों से बचाने का विशेष प्रबन्ध करना चाहिए।
11. पौध क्यारियों में खरपतवारों को हाथ से या पतले फर वाली खुरपी से निकालना चाहिए।
12. पौधघर से तैयार पौध को निकालने से 24 घण्टे पहले क्यारियों में हल्की सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिए।
13. पौध निकालते समय मिट्टी शुष्क या अधिक गीली नहीं होनी चाहिए।
14. फलों व बहुवर्षीय पौधों को नर्सरी से मिट्टी के पिण्ड सहित निकालना चाहिए और दूरस्थ स्थानों पर भेजने के लिये पैकिंग अच्छी तरह से करनी चाहिए या पौधों को पॉलीथीन थैलियों में तैयार करना चाहिए।
15. रोपाई के लिये फूल व शाकों की पौध की आयु सामान्यतया 4–6 सप्ताह से अधिक नहीं होनी चाहिए तथा रोपाई कार्य सांयकाल को ही करना चाहिए।
16. ग्राफ्टेड पौधों की कली या शाखा का जोड़ रोपाई के बाद धरातल से 20–25 सेमी ऊपर रहना चाहिए।

17. रोपाई करते समय प्रत्येक स्थान पर एक पौधा ही लगाना चाहिए।

18. फल वृक्षो के पौधों को गड्ढे के ठीक मध्य में तथा सीधा लगाना चाहिए और इनके पिण्ड व जड़ो के चारों तरफ की मिट्टी अच्छी तरह दबा देनी चाहिए।

19. खेत का प्रतिदिन निरीक्षण कर कमजोर या मरे हुए पौधों के स्थान पर नई पौध का प्रतिरोपण अवश्य करना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न–

1. पौधशाला में नवांकुर पौधों को मुख्य रूप से हानि पहुँचाने वाली व्याधि कौन सी है?

(अ) आर्द्रगलन (ब) छाछ्या

(स) पर्ण कुन्चन (द) विषाणु

2. नर्सरी की मृदा में दीमक तथा भूमिगत कीटों से बचाव के लिये मिलाना चाहिए –

(अ) 2, 4–डी (ब) क्लोरपायरीफॉस

(स) गंधक का चूर्ण (द) मैलाथियान 50 प्रतिशत

3. पौध क्यारियों की सामान्यतया चौड़ाई रखनी चाहिए –

(अ) 1 मीटर से कम

(ब) 1 से 1.5 मीटर

(स) 1.5 मीटर से अधिक

(द) 2 से 2.5 मीटर

4. बुआई से पूर्व बीजों को कवकनाशी रसायनों की कितनी मात्रा से उपचारित करना चाहिए?

(अ) 5 ग्राम/किग्रा बीज

(ब) 1 ग्राम/किग्रा बीज

(स) 2–3 ग्राम/किग्रा बीज

(द) 10 ग्राम/किग्रा बीज

5. सामान्यतः किस आयु में वार्षिक पौधों की पौध रोपाई करनी चाहिए?

(अ) 1 सप्ताह में (ब) 8–10 सप्ताह में

(स) 2 सप्ताह में (द) 4–6 सप्ताह मे

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

6. पौधशाला में काम आने वाले यंत्र व उपकरणों की सूची बनाइए।

7. पौध घर से पौधे निकालने के बाद उनकी पैकिंग क्यों की जाती है ?

8. पौधशाला से क्या तात्पर्य है ? इसके महत्व को समझाइए।

9. पौधशाला की भूमि की विशेषतायें लिखिए।

10. पौध तैयार करके रोपाई की जाने वाली पाँच सब्जियों के नाम, पौध क्षेत्र प्रति हेक्टेयर, बीज की मात्रा तथा बुआई का समय लिखिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

11. फूलों व सब्जियों की पौध को नर्सरी क्षेत्र से कैसे निकाला जाता है ?

12. पौधशाला के लिये स्थान का चुनाव करते समय किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए।

13. फूल तथा सब्जियों की पौध तैयार करने की विधि लिखिए।

निबन्धात्मक प्रश्न–

14. पौध प्रतिरोपण से क्या तात्पर्य है? फलों व बहुवर्षीय पौधों को नर्सरी से निकालने, पैकिंग करने तथा रोपाई की विधि लिखिए।

15. पौधशाला निर्माण तथा पौध तैयार करने में कौन–कौन सी सावधानियाँ रखनी चाहिए ?

उत्तरमाला– 1. (अ) 2. (ब) 3. (ब) 4. (स) 5. (द)

अध्याय–10
सब्जियों की खेती (Cultivation of vegetables)

टमाटर
(Tomato)

वानस्पतिक नाम *लाइकोपर्सिकन लाइकोपर्सिकम* (एल) कार्सटन
***Lycopersicon Lycopersicum* (L.) Karsten**
कुल : सोलेनेसी (Solanaceae)

टमाटर सोलेनेसी कुल की एक अत्यन्त लोकप्रिय सब्जी है । इसके फलों को विभिन्न प्रकार से प्रयोग में लाया जाता है। ताजी अवस्था में सलाद के रूप में और पका कर सब्जी, सूप व परिरक्षित करके चटनी, जूस, अचार, सॉस, केचप, प्यूरी इत्यादि रूप में प्रयोग में लाया जाता है । इसके पके फलों की डिब्बाबन्दी भी की जाती है ।

टमाटर एक बहुत पौष्टिक शाक है। टमाटर में 94 प्रतिशत जल, 0.9 प्रतिशत प्रोटीन, 0.2 प्रतिशत वसा, 3.6 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 20 पी.पी.एम. कैल्शियम, 48 पी.पी.एम फॉस्फोरस तथा 31 मि.ग्रा./100 ग्राम फल विटामिन 'सी' होता है । टमाटर औषधीय गुणों से भरपूर होता है, जिनमें रक्त साफ करना एवं पित्त मिटाना प्रमुख है।

जलवायु – टमाटर की अच्छी पैदावार में तापक्रम का बहुत बड़ा योगदान होता है । टमाटर की फसल के लिए इष्टतम तापमान 20^0 से 25^0 सेल्सियस होता है, अंकुरण के लिए इष्टतम तापमान 21^0 से 26^0 सेल्सियस है । तापक्रम अधिक होने पर फूल व अपरिपक्व फल गिरने लगते हैं । लू चलने पर नुकसान और बढ़ जाता है। 16 डिग्री से कम और 38 डिग्री से ज्यादा तापमान पर परागकणों का अंकुरण बहुत कम हो जाता है तथा इसके परिणामस्वरूप कम फल लगते हैं और फलों का स्वरूप भी बिगड़ जाता है । टमाटर में लाल रंग लाइकोपीन नामक वर्णक के कारण होता है । 20^0 से 25^0 सेल्सियस से ऊपर इस वर्णक का उत्पादन तेजी से गिरने लगता है और 30 डिग्री सेल्सियस से ऊपर इसका निर्माण बन्द हो जाता है जिससे टमाटर पीला दिखने लगता है ।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation): टमाटर की खेती लगभग सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है परन्तु उचित जल निकास वाली रेतीली दोमट या दोमट मृदा जिसमें पर्याप्त मात्रा में जीवांश उपलब्ध हो इसकी खेती के लिए उपयुक्त होती है । साधारणतया इसकी खेती 6–7 पी.एच. मान वाली मृदाओं में अच्छी होती है । टमाटर के लिए समतल सतह वाली भुरभुरी भूमि की आवश्यकता होती है। इसके लिए एक जुताई, मिट्‌टी पलटने वाले हल से व 3–4 बार हैरो से करनी चाहिए।

बुआई का समय एवं बीज की मात्रा (Time of sowing and Seed rate):– टमाटर की पौध तैयार करके खेत में स्थानान्तरित की जाती है । खरीफ फसल लेने हेतु बीज जून माह में, गर्मी की फसल हेतु दिसम्बर–जनवरी में व सर्दी हेतु सितम्बर माह में बोने चाहिए । खेत की रोपाई हेतु 400 से 500 ग्राम बीज प्रति हैक्टेयर तथा संकर किस्मों में 150–200 ग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता पड़ती है । बीजों को बुवाई से पूर्व 2 ग्राम कैप्टान या बाविस्टिन 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें । बीजों को 5–7 से.मी. की दूरी पर कतारों में बोया जाता है ।

रोपण – जब पौधे (10 से 15 से.मी. लम्बे) 4–5 सप्ताह के हो जाएं, तो इनकी रोपाई कर देनी चाहिए । पौधे की रोपाई खेत में शाम के समय करें । साधारण किस्मों में कतार से कतार व पौधे से पौधे के मध्य 45 x 45 से.मी. व संकर किस्मों में 90 x 45 से.मी. रखी जाती है ।

उन्नत किस्में (Improved varieties):

पूसा रूबी, पूसा अर्ली ड्वार्फ, मारग्लोब, पंजाब छुआरा, रोमा, पंत बहार, अर्का विकास, हिसार अरूण (सलेक्शन 7), एमटीएच 6, एचएस 101, पंजाब केसरी, पन्त टी–1, अर्का सौरभ

संकर किस्में – कर्नाटक हाईब्रिड, रश्मि, सोनाली, पूसा हाईब्रिड–1, पूसा हाइब्रिड–2, एआरटीएच – 3, एच ओई 606, एनए 601, बीएसएस 20, अविनाश–2,

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : टमाटर की अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए भूमि में पर्याप्त मात्रा में खाद एवम् उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक है । अतः प्रति हेक्टेयर की दर से 20–25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद और तत्व के रूप में 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 80 कि. ग्रा. फास्फोरस एवं 60 कि.ग्रा. पोटाश बुआई के पहले दें । पौधे लगाने के 30 दिन व 50 दिन बाद 30–30 कि.ग्रा. नत्रजन की मात्रा खड़ी फसल में देकर सिंचाई करें ।

टमाटर की चिटकन की समस्या रोकने के लिए 0.3 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव फल लगने के समय व इसके 15 दिनों के बाद करें तथा तीसरा छिड़काव जब फल पकने शुरू हों तब करें ।

सिंचाई (Irrigation): पौधरोपण के बाद दो–तीन दिन तक फुहारों से हल्की सिंचाई करे या रोपण के पश्चात् हल्की सिंचाई इस प्रकार करें जिससे पौधे अच्छी प्रकार से वृद्धि कर सकें । सर्दी में 8 से 10 दिन व गर्मी में 5–6 दिन के अन्तराल से आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए ।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): पौध लगाने के 20 से 25 दिन बाद प्रथम निराई–गुड़ाई करें । आवश्यकतानुसार दुबारा निराई–गुड़ाई कर खेत से खरपतवारों को निकालें । अनिर्धारित वृद्धि वाली किस्मों को सहायता देने के लिए छड़ियाँ (Staking) लगाकर बाँध देना चाहिये। इससे फलों की गुणवता तो बढ़ती ही है साथ ही वे सड़ने से भी बच जाते हैं।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases):–

कीट (Insect pests)

फल छेदक (Fruit borer): इस कीट का डिंभक फल में प्रवेश कर गूदा खाता रहता है व फल को बिल्कुल बेकार कर देता है। इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. 1 मिली प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

हरा तेला (Jassid): ये छोटे–छोटे कीड़े हैं तथा पत्तियों का रस चूसते हैं एवं विषाणु रोग फैलाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए मिथाएल डिमेटान 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल से करना चाहिए।

सफेद मक्खी, पर्ण जीवी, हरा तेला व मोयला – ये कीट पौधों की पत्तियों व कोमल शाखाओं से रस चूसकर कमजोर कर देते हैं । सफेद मक्खी टमाटर में विषाणु रोग फैलाती है । नियन्त्रण के लिए डाइमेथोएट 30 ईसी या मेलाथियान 50 ईसी एक मि.ली. का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें । आवश्यकता पड़ने पर यह छिड़काव 15 से 20 दिन बाद करें ।

कटुआ कीट (Cut worm): ये कीट रात के समय पत्तियाँ खाते है एवं दिन के समय छिपे रहते हैं। पौधों को जमीन की सतह से काटकर गिरा देते हैं। इनके नियंत्रण के लिए खेत में फसल रोपाई से पूर्व मिथाईल पैराथियान (2%) धूल को 20–25 किलोग्राम प्रति हैक्टर की दर से भूमि में अच्छी तरह से मिला दें।

व्याधियाँ (Diseases):–

आर्द्रगलन (Damping off): टमाटर का यह एक गम्भीर रोग है जो फफूंद *पीथियम जाति (Pythium spp.)* या *राइजोक्टोनिया जाति (Rhizoctonia spp.)* या *फाइटोफ्थोरा जाति (Phytophthora spp.)* के कारण होता है। रोग के प्रकोप से पौधे का जमीन की सतह पर स्थित तने का भाग काला पड़ जाता है तथा नन्हे पौधे गिर कर मरने लगते हैं । यह रोग भूमि एवं बीज के माध्यम से फैलता है

रोकथामः– बुवाई से पहले बीजो को थायरम या केप्टान 3 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें।

गुच्छा मुच्छा रोग (Mosaic): यह एक विषाणु जनित रोग है। इससे प्रभावित पौधे की पत्तियाँ व तना सिकुड़कर छोटे हो जाते हैं व पौधों की बढ़वार रूक जाती है।

रोकथामः– रोगी पौधों को जड़ सहित उखाड़कर जला दें। रोगग्रस्त फसल पर मैलाथियान, मैटासिस्टॉक्स या डाइमिथोएट, 2 ग्राम दवा प्रति लीटर के घोल का छिड़काव करें।

पर्ण कुंचन (Leaf curl): इस रोग का विषाणु सफेद मक्खी (White fly) द्वारा फैलाया जाता है। पत्तियाँ छोटी, पौधा झाड़ीनुमा, अविकसित, शाखाएँ छोटी, पत्तियाँ विभिन्न प्रकार से मुड़ी–सिकुड़ी व टेढ़ी–मेढ़ी हो जाती हैं।

रोकथामः– रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर जला दें। सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए डाइमिथोएट नामक कीटनाशी का 1 मि.ली प्रति लीटर के घोल का छिड़काव करें। बीज जमाव के बाद क्यारी को एग्रोनेट जाली से ढक दें।

अगेती झुलसा (Early blight): इस रोग का कारण *अल्टरनेरिया सोलनाइ* नामक फफूंद है। इस रोग में पत्तियों पर गोल काले व भूरे धब्बे दिखायी देते हैं व पत्तियाँ झड़ जाती हैं।

रोकथामः– 1. सभी रोगग्रस्त पौधों को उखाडकर जला दें। 2. रोग के लक्षण परिलक्षित होते ही ब्लाईटॉक्स 2 ग्राम प्रति लीटर के हिसाब से छिड़काव 14 दिन के अन्तर से करें।

सूत्र कृमि रोग (Root knot nematode): यह एक मूल ग्रन्थि रोग है जिसमें पौधों की जड़ो में गाँठें बन जाती हैं। यह रोग *मेलायडोगायनी (Meloidogyne)* के कारण होता है।

रोकथामः–1. रोग अवरोधी जातियों का प्रयोग करें।

2. पौध रोपण से पूर्व 25 किलो कार्बोफ्यूरॉन 3 जी प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलायें।

सन बर्न – उत्तर भारत में अप्रेल – मई के महीनों में टमाटर के फल सूर्य के प्रकाश के सीधे सम्पर्क में आने से सफेद पड़ने लगते हैं । नियन्त्रण के लिए ऐसी किस्मों का चयन करें, जिनमें पत्तियाँ अधिक निकलती हों । सिंचाई की अच्छी व्यवस्था रखें । टमाटर की दो–तीन पंक्तियों के बीच सनई या ढैंचा लगायें ताकि छाये से फल खराब न हों ।

तुड़ाई व उपज (Harvesting and Yield): –

टमाटर के फलों को जब उनकी बढ़वार पूरी हो जाये तथा लाल व पीले रंग की धारियाँ दिखने लगे उस अवस्था मे तोड़ लेना चाहिए व कमरे में रख कर पकाना चाहिए । साथ ही साथ अधपके टमाटर को लम्बे स्थानों तक भेजा जा सकता है । खेत से टमाटर तोड़ने के पश्चात् रोग ग्रसित सड़े गले इत्यादि फलों को सर्वप्रथम छाँट कर अलग कर देना चाहिए । आकार के अनुसार वर्गीकरण कर बाजार में भेजने पर अच्छा बाजार भाव मिलता है । टमाटर की उपज किस्म, बुआई की विधि, खाद व उर्वरकों की मात्रा, मौसम आदि पर निर्भर करती है । टमाटर की औसत उपज 300 – 350 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक होती है ।

बैंगन (Brinjal)

वानस्पतिक नाम : *सोलेनम मेलोनजेना एल.* (*Solanum melongena* L.)

कुल : सोलेनेसी (Solanaceae)

बैंगन (*सोलेनम मेलोनजेना*), सोलेनेसी कुल की सब्जी की एक मुख्य फसल है । इसे अत्यधिक ऊँचाई वाले स्थानों को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में उगाया जाता है। इसके पौधे बड़े आकार के होते हैं व फल तीखा, गर्म, उत्तेजक, क्षुधावर्धक, रक्तवर्धक, पित्त एवं कफनाशक होता है। इसकी खेती पूरे प्रदेश में की जाती है परन्तु जयपुर, कोटा, श्रीगंगानगर एवं जोधपुर जिलों में इसकी खेती बहुतायत से होती है इसमें विटामिन 'ए', 'सी', प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट व खनिज पदार्थो में लोह तत्व की पर्याप्त मात्रा होती है।

जलवायु (Climate) – यह ऊष्ण कटिबंधीय जलवायु की सब्जी है । इसे एक लम्बे गर्म मौसम की आवश्यकता पड़ती है । टमाटर की तरह यह भी पाले से प्रभावित होती है। अगेती तथा लम्बी किस्मों की अपेक्षा पछेती व गोल किस्म कुछ पाला सह सकती है । इसकी सफल खेती के लिए 13–21 डिग्री से. औसत तापमान उपयुक्त रहता है ।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation): यह किसी भी प्रकार की मृदा में उगाया जा सकता है परन्तु अच्छे जल निकास वाली जीवांश युक्त, गहरी उपजाऊ दोमट मृदा सर्वोत्तम होती है । पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए 6.5 से 7.5 पीएच होनी चाहिए। अगेती किस्म के लिए बलुई हल्की मृदा उपयुक्त है ।

बुआई का समय एवं बीज की मात्रा (Time of sowing and seedrate) – बैंगन की बुआई और रोपण का उपयुक्त समय –

फसल	बीज की बुआई का समय	पौध रोपण का समय
शरद कालीन	जून–जुलाई	जुलाई–अगस्त
ग्रीष्मकालीन	दिसम्बर–जनवरी	फरवरी–मार्च
वर्षाकालीन	मार्च–अप्रैल	अप्रैल–मई

एक हेक्टेयर में पौध रोपाई के लिए 400 – 500 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है ।

उन्नत किस्में (Improved varieties):

1. लम्बे फल वाली किस्में: पूसा परपल लॉग, पूसा परपल क्लस्टर, पूसा अनुपम, पत सम्राट, आजाद क्रान्ति, पूसा क्रान्ति, पंजाब सदाबहार ।

2. गोल फल वाली किस्में: पूसा परपल राउण्ड, टाइप–3, सेलेक्शन–1, पी.बी.एच. 6, पूसा अनमोल, पंत ऋतुराज।

3. संकर किस्में: पूसा हाइब्रिड–6, नरेन्द्र संकर–2, पूसा हाइब्रिड–9, अर्का नवनीत।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): – बैंगन के खेत में जुताई के समय 20–25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद मिला दें । अन्तिम जुताई से पूर्व 40 कि.ग्रा. नत्रजन,

80 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 60 कि.ग्रा. पोटाश को प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में समान रूप से मिला कर जुताई कर दें । शेष 40 कि.ग्रा. नत्रजन रोपाई के 45 दिनों बाद देवें ।

सिंचाई (Irrigation): बैंगन की फसल के लिए उपयुक्त एवं पर्याप्त मात्रा में सिंचाई आवश्यक है। भूमि के प्रकार के अनुसार शरद ऋतु में 10–15 दिन व ग्रीष्म ऋतु में 5–6 दिन के अंतर से सिंचाई करना आवश्यक होता है।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): खेत को साफ एवं भुरभुरा बनाने के लिए नियमित निराई एवं गुड़ाई आवश्यक है। खेत में पहली निराई 30–40 दिन के अंतराल पर व दूसरी 60–65 दिन बाद करनी चाहिए।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases):–

1. कीट (Insect pests) तना एवं फल छेदक (Stem & Fruit borer)- यह कीट तने तथा फल में छेदकर उन्हे खाता है, प्रारम्भ में तने पर छेद कर उसमें घुस जाता है तथा अन्दर ही अन्दर काटता रहता है जिससे पौधा सूख जाता है।

रोकथामः– 1. कीटग्रस्त शाखाओं एवं फलों को तोड़कर जला देवें।

2. मैलाथियान 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिडकाव करें या कार्बोरिल का 1.5 किलोग्राम प्रति हैक्टर की दर से भुरकाव करें।

3. कीटरोधी किस्में उगाएं।

2. हरा तेला (Jassid), मोयला (Aphid) व सफेद मक्खी (White fly)– ये कीट पत्तियों के नीचे या कोमल भागों का रस चूसकर पौधों को कमजोर बना देते हैं।

3. लाल माइट (Red mite)– यह छोटा सा कीट पत्तियों का रस चूसकर उन्हे कमजोर बना देता है। पत्तियाँ पीली पड़कर गिरने लगती हैं।

रोकथामः– डाईमिथोएट 30 ई सी 1 मिली / लीटर या मैलाथियान 50 ईसी 1 मिली / लीटर या मिथाइल डिमेटान 25 ईसी 1 मिली / लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

4. एपीलेकना बीटल (Epilachna beetle) यह कीट लाल रंग का होता है व मुख्यतः पत्तियाँ खाता है व उन्हें छलनीनुमा बना देता है।

रोकथामः 1.कार्बेरिल, एवं मैलाथियान का 1 मि.ली. प्रति लीटर घोल का छिड़काव करना चाहिए।

2. हाथ से इसके अण्डो, सूँड़ी और प्रौढ़ो को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए।

व्याधियाँ (Diseases):–

1. छोटी पती रोग (Little leaf) यह बैंगन का एक माइकोप्लाज्मा जनित विनाशकारी रोग है । इस रोग के प्रकोप से पत्तियाँ छोटी रह जाती है तथा गुच्छे के रूप में तनों के ऊपर उगी हुई दिखाई देती है । पूरा पौधा झाड़ीनुमा लगता है व ऐसे पौधों पर फल नहीं बनते हैं ।

रोकथामः–

1. रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर जला दें।
2. फसल चक्र अपनाएँ।
3. 1 मिली / लीटर मिथाइल डिमेटान 25 ई सी या 1 मिली डाइमिथोएट 30 ईसी प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

2. आर्द्र गलन (Damping off)– यह रोग पौधों में पौधशाला से ही लग जाता है। रोगग्रस्त पौधों का निचला तना गलने लगता है। तरूण पौधों का मुरझाना और बाद में सूख जाना इस रोग का प्रमुख लक्षण है।

रोकथामः–

1. बीज को बुआई पूर्व फफूंदनाशी दवा थाइरम 2–3 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें।
2. पौधशाला में बीज सदैव पंक्तियों में बोएँ।
3. फार्मेलिन 0.2% से नर्सरी की भूमि उपचारित करें।

3. सूत्र कृमि रोग (Nematode diseases) बैंगन के पौधो में सूत्रकृमि के प्रभाव से जडों में गाठें बन जाती है। तथा पौधों की वृद्धि रूक जाती है, पतियाँ गिरने लगती है एवं उपज कम हो जाती है।

रोकथामः– 1. फ्यूराडॉन 1.5 से 2 किग्रा सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से पौध रोपण के समय भूमि मे डालें।

2. रोगी पौधों को उखाड़कर जला दें ताकि उनमें बीज न बन सके।

4. फोमोप्सिस झुलसा (Phomopsis Blight)– यह बैंगन की प्रमुख बीमारी है जिसका प्रभाव पौधे के प्रत्येक भाग पर होता है । प्रभावित फल सड़ने लगते हैं और धीरे–धीरे सम्पूर्ण फसल नष्ट हो जाती है ।

रोकथामः– 1. रोग रहित बीज की बुआई करें, बीजों को बाविस्टिन से 2.5 ग्राम दवा प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करके बुआई करें । फसल चक्र अपनायें । संक्रमित फसल अवशेषों को एकत्र करके जला दें।

तुड़ाई व उपज (Harvesting and Yield): – जब फलों की पूरी बढ़वार हो जाये लेकिन उनका रंग फीका न पड़े और उनमें बीज न बने हो, तुड़ाई करनी चाहिए । इसकी उपज लगभग 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है तथा संकर किस्मों से 350–400 क्विंटल प्रति हैक्टर तक पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

मिर्च (Chilli)

वानस्पतिक नाम : *कैप्सिकम एनम्* एल. एवं *कैप्सिकम फ्रूटेसेन्स* एल.

(***Capsicum annum*** **L. and** ***Capsicum frutescens*** **L.**)

कुल : सोलेनेसी (Solanaceae)

Capsicum annum var. longum

Capsicum annum var. grosum

मिर्च का उपयोग कच्चा सलाद के रूप में, अचार बना कर, पकी लाल मिर्च को सुखा कर मसाले की तरह तथा हरी–मीठी मिर्च को सब्जी के लिए प्रयोग में लाते हैं । इसकी खेती सम्पूर्ण भारत में की जाती है परन्तु दक्षिणी राज्यों में यह बहुतायत से उगाई जाती है। इसके फलों में तीखापन ''केप्सेसिन'' (Capsacin) के कारण होता है। मिर्च में विटामिन ''ए'' तथा ''सी'', फॉस्फोरस तथा कैल्सियम प्रमुखता से पाये जाते हैं। इसका फल तेज स्वाद वाला, रक्तवर्धक, पीड़ानाशक, दर्द और सूजन दूर करता है।

जलवायु (Climate) – टमाटर व बैंगन के समान मिर्च के लिए भी गर्म जलवायु सबसे अच्छी रहती है । इसे उष्ण तथा उपोष्ण भागों में सफलतापूर्वक उगाया जाता है । फल बनने के लिए उपयुक्त तापमान 24^0 से. है । उच्च तीव्रता वाले प्रकाश में फलों की उपज तो बढ़ती है परन्तु केप्सेसिन की मात्रा घटाती है, साथ ही रंग के विकास में काफी देरी होती है । शिमला मिर्च के लिए अपेक्षाकृत ठंडा मौसम अनुकूल रहता है

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation): अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी इसके लिए उपयुक्त मानी जाती है। इसके लिए भूमि का पी.एच. मान 6 से 7.5 होना चाहिये। अधिक लवण व क्षार वाली मृदा मिर्च के लिए उपयुक्त नहीं है इससे बीज अंकुरण तथा पादप ओज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। रोपाई पूर्व खेत में 5–6 जुताइयाँ करके एक बार पाटा लगाकर भूमि को समतल कर लेना चाहिए।

बुआई का समय एवं बीज की मात्रा (Time of sowing and seed rate) – मिर्च की वर्ष में तीन फसलें ली जा सकती है, लेकिन प्रायः इसकी फसल खरीफ एवं गर्मी में ली जाती है । पहले पौधशाला में बीज की बुआई कर पौध तैयार की जाती है । इसके लिए खरीफ की फसल हेतु मई–जून में और गर्मी की फसल हेतु फरवरी–मार्च में नर्सरी में बीज की बुआई करें । बीजों की बुआई से पूर्व 2 ग्राम केप्टान या बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें जिससे बीज जनित रोगों का प्रकोप न हो सके । एक हेक्टेयर खेत में मिर्च की खेती के लिए 1 – 1.5 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है ।

उन्नत किस्में (Improved varieties): मिर्च की किस्मों को दो वर्गो में बाँटा जाता है।

मसाले वाली – पूसा ज्वाला, पंत सी–1, कल्याणपुर टाईप 1, कल्याणपुर मोहिनी, पूसा सदाबहार (निर्यात हेतु बहुवर्षीय), जवाहर मिर्च 128, अग्नि, डी.सी.एच.1,एनपी 46ए, हंगेरियन वैक्स (पीले रंग वाली),

शिमला मिर्च (सब्जी वाली) – कैलीफोर्निया वण्डर, रूबी किंग, बुलनोज, यलो वंडर, चायनीज जाएण्ट, सेलेक्शन–27, अर्का मोहिनी

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): – मिर्च की पैदावार उसमें प्रयुक्त खाद एवं उर्वरकों की मात्रा व किस्म पर निर्भर करती है । अच्छी उपज के लिए 25–30 टन प्रति हेक्टेयर सड़ी गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय खेत में मिलावें तथा तत्व रूप में 70–80 कि.ग्रा. नत्रजन, 40–45 कि. ग्रा. फास्फोरस तथा 40–50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए । नाइट्रोजन की आधी व फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा रोपण से पहले दे तथा शेष नाइट्रोजन को दो भागों में बाँट कर रोपण से 25 व 45 दिनों बाद खड़ी फसल में डालें ।

सिंचाई (Irrigation): पौधे रोपण के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करना अत्यन्त आवश्यक है । उसके बाद आवश्यकता अनुसार सिंचाई करना चाहिए । मिर्च में भूमि तथा ऋतु के अनुसार सिंचाई की आवश्यकता होती है। यदि वर्षा कम हो रही

हो तो 10–15 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए । गर्मी के महीनों में सिंचाई एक सप्ताह के अन्तराल पर करें ।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): मिर्च की फसल से अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए खेत में समय–समय पर निराई–गुड़ाई करते रहना चाहिए। प्रत्येक सिंचाई के बाद खेत में हल्की गुड़ाई करनी चाहिए ताकि सिंचाई के समय बनी हुई मिट्टी की पपड़ी टूट जाए। यदि पौधा अधिक भारी नजर आये तो पौधों पर मिट्टी चढ़ा कर सहारा दें।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases):–

1. हरा तेला (Jassid), मोयला (Aphid) व सफेद मक्खी (White fly)– ये कीट पत्तियों के नीचे या कोमल भागों का रस चूसकर पौधों को कमजोर बना देते हैं।

रोकथामः– डाईमिथेएट 30 ई सी 1 मिली / लीटर या मैलाथियान 50 ईसी 2 मिली / लीटर या मिथाइल डिमेटॉन 25 ईसी 1 मिली / लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

2 लाल माइट (Red mite)– यह छोटा सा कीट पत्तियों का रस चूसकर उन्हें कमजोर बना देता है। पत्तियाँ पीली पड़कर गिरने लगती हैं।

रोकथामः– हरा तेला की भाँति।

व्याधियाँ (Diseasè):–

1. आर्द्र गलन (Damping off)– यह रोग नर्सरी में होता है तथा इसके कारण छोटे पौधे मर जाते हैं।

रोकथाम– 1. बीज बोने से पूर्व उन्हे एग्रोसन जी.एन. या सेरेसान से उपचारित करें।

2. फार्मेलिन 0.2% से नर्सरी की भूमि उपचारित करें।

3. नर्सरी, आस–पास की भूमि से 4 से 6 इंच उठी हुई भूमि में बनावें ।

2. मोजैक (Mosaic)- इस रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियाँ सिकुड़कर छोटी हो जाती हे तथा तना भी छोटा हो जाता है। पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं।

रोकथाम 1. रोगग्रस्त पौधों को उखाडकर जला दें।

2. रोगी रोधी किस्में जैसे पूसा सदाबहार, पूसा ज्वाला, पंत सी–1 व 2 को उगाएँ।

3. मैलाथियान 50 ई.सी. का 1 मि.ली प्रति लीटर का घोल बनाकर 10–15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

3. मुरझान (Wilt)- इस रोग से ग्रस्त पौधा अचानक सूख जाता है।

रोकथाम –1. उचित फसल चक्र अपनायें।

2. ताम्रयुक्त दवाओं का प्रयोग करें।

4. पर्ण संकुचन रोग (Leaf curl)– रोगग्रस्त पौधे की पतियाँ छोटी होकर मुड़ जाती है, पौधा छोटा रह जाता है व शीर्ष पर गुच्छा बन जाता है।

रोकथाम–1. एफिड नियंत्रण करें।

2. डाईमिथेएट 30 ई सी 1 मिली / लीटर का छिड़काव करें।

3. प्रभावित पौधों को उखाडकर जला दें।

तुड़ाई व उपज (Harvesting and Yield): – हरी मिर्च की तुड़ाई फल लगने के 15–20 दिन बाद कर सकते हैं । यदि सूखी लाल मिर्च के लिए तुड़ाई करनी हो तो एक या दो बार हरी मिर्च की तुड़ाई करके मिर्च पौधे पर ही पकने के लिए छोड़ दी जाती है । इससे फूल बहुलता से आते हैं । हरी मिर्च की 100–150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है ।

फूल गोभी (Cauliflower)

वानस्पतिक नाम – *ब्रेसिका ओलेरेसिया एल.किस्म बोट्राइटिस* (*Brassica oleracea L. var.botrytis*)

कुल – ब्रेसिकेसी (Brassicaceae)

फूलगोभी (*ब्रेसिका ओलेरेसिया* किस्म *बोट्राइटिस*), क्रूसीफेरी कुल की सब्जियों में एक प्रमुख स्थान है । इसकी खेती मुख्य रूप से श्वेत, अविकसित व गठे हुए पुष्पकुंज (कर्ड) के लिए की जाती है जिसका प्रयोग सब्जी, सूप, अचार, सलाद, बिरियानी, पकोड़ा इत्यादि बनाने में किया जाता है । आयुर्वेदिक चिकित्सा में भी इसका विविध महत्व है । पाचन शक्ति बढ़ाने के साथ–साथ मधुमेह रोग के निदान में यह अत्यन्त लाभदायक है । फूल गोभी उत्पादन में भारत का विश्व में प्रथम स्थान है । राजस्थान में भी इसको बहुतायत से उगाया जाता है। यह प्रोटीन, कैल्सियम, विटामिन ए व विटामिन सी का भी अच्छा स्रोत है ।

जलवायु (Climate) – फूलगोभी मुख्यतः शीतोष्ण (ठण्डे) प्रदेश की फसल है । इनकी खेती अब उष्ण एवं उपोष्ण स्थानों पर भी सफलतापूर्वक की जा रही है । फूलगोभी, तापक्रम या

प्रकाश अवधि के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती है । जलवायु की उचित परिस्थितियों के अनुसार इसकी किस्मों का चुनाव कर समय पर बुआई करनी चाहिए । अगेती तथा उष्ण (ट्रॉपिकल) किस्मों को उच्च तापमान तथा लम्बे प्रकाश काल की आवश्यकता होती है तथा इनमें कर्ड बनने के लिए 20–25 डिग्री से. तापमान की आवश्यकता होती है जबकि शीत प्रदेशों की (टेम्परेट) किस्मों में कर्ड बनने के लिए 10–16 डिग्री से. तापमान की आवश्यकता होती है । अत्यधिक तापमान (30–32 डिग्री से. अधिक) होने पर फूल (कर्ड) निम्न गुणवत्ता जैसे दानेदार, ढीले, रोयेंदार, पत्तीदार एवं पीले बनते हैं । तापमान औसत से कम होने पर परिपक्वता देर से आती है तथा फूल अत्यन्त ही छोटे बनते हैं ।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation): फूल गोभी की खेती विभिन्न प्रकार की जीवांश युक्त अच्छे जल निकास वाली मृदा में सफलतापूर्वक हो सकती है। अगेती किस्मों के लिए बलुई दोमट तथा पछेती किस्मों के लिए दोमट या चिकनी दोमट अधिक उपयुक्त रहती है। इसकी खेती के लिए उपयुक्त पी.एच. मान 6–7 रहता है । अति अम्लीय (पीएच मान 5 से कम) मृदा होने पर मोलिब्डेनम की कमी हो जाती है जिससे व्हीप टेल रोग हो जाता है तथा अधिक क्षारीय मृदा में बोरान की कमी होने से फूलों में भूरा गलन रोग हो जाता है ।

बुआई का समय एवं बीज की मात्रा (Time of sowing and seed rate) – इसकी पौध पहले पौधशाला में तैयार की जाती है तत्पश्चात् उन्हें खेत में स्थानान्तरित किया जाता है । पौध तैयार करने के लिए अगेती किस्मों के बीज जून–जुलाई में मध्यम किस्मों के बीज अगस्त में व पछेती किस्मों के बीज अक्टूबर माह में पौधशाला में बोते हैं । जब पौध पर 3–4 पत्तियाँ आ जाएं तथा ये 30–45 दिन की हो जाएं तो इनकी मुख्य खेत में रोपाई कर देते हैं। अगेती किस्मों के लिए 600–700 ग्राम बीज तथा मध्यम व पछेती किस्मों के लिए 350 से 400 ग्राम बीज एक हेक्टेयर में पौध रोपाई के लिए पर्याप्त है। अगेती किस्मों में कतार से कतार 40 सेमी. व पौधे से पौधे के मध्य दूरी 30 से. मी. रखते हैं जबकि मध्यमी व पछेती किस्मों में अधिक वृद्धि होने

45 से.मी. रखते हैं ।

उन्नत किस्में (Improved varieties): फूल गोभी की किस्मों को उनके बुआई के समय के आधार पर तीन वर्गों में बाँटा गया है।

1. **अगेती किस्में (मध्य अगस्त से मध्य नवम्बर)** पूसा दीपाली, अर्ली कुआरी, अर्ली पटना, पूसा केतकी, पंत गोभी–3, पूसा अर्ली सिन्थेटिक आदि।
2. **मध्यकालीन किस्में (मध्य नवम्बर से मध्य जनवरी)–** इम्प्रूब्ड जापानीज, पूसा अगहनी, हिसार नं. 1, पूसा सिन्थेटिक, डी 96, पूसा हिमज्योति आदि।
3. **पिछेती किस्में (फरवरी से अप्रेल)** पूसा स्नोबाल के–1, स्नोबाल–16 आदि।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): – फूल गोभी की अच्छी फसल के लिए खेत में पर्याप्त मात्रा में जीवांश का होना अत्यन्त आवश्यक है । अतः 20 से 25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद खेत में भलीभांति मिला दें। इसके अलावा 120 किलोग्राम नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 60–80 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा व फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई या रोपण से पूर्व खेत में अच्छी प्रकार मिला देना चाहिए तथा शेष आधी नाइट्रोजन की मात्रा दो बराबर भागों में बाँट कर खड़ी फसल में 30 व 45 दिन बाद टॉप ड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिए ।

सिंचाई (Irrigation): पौध प्रतिरोपण के तुरन्त बाद सिंचाई करे। फूलगोभी की अगेती किस्मों में 6–7 दिन के अन्तर पर तथा मुख्य एवं पिछेती फसल में 10–12 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिये।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): फसल को खरपतवारों से बचाने के लिए समय समय पर निराई–गुड़ाई आवश्यक है। फूलगोभी की फसल में 2–3 निराई–गुड़ाई करने की आवश्यकता पड़ती है। खेत में गहरी निराई–गुड़ाई न करें एवं यह क्रिया करते समय पौधों पर मिट्टी चढ़ाएं।

ब्लांचिंग – फूल गोभी का अच्छा फूल बिल्कुल दूधिया सफेद होना चाहिए । इसे प्राप्त करने के लिए फूल को सूर्य के प्रकाश के सीधे सम्पर्क से बचाना चाहिए । वृद्धि की प्रारम्भिक अवस्था में फूल पत्तों से ढके रहते हैं परन्तु बाद में बढ़ने पर वह खुल जाते हैं तथा धूप के सम्पर्क में आकर पीले पड़ जाते हैं । इसके बचाव के लिए नीचे की पत्तियों को फूल के ऊपर रबर के छल्ले से बाँध देते हैं या फिर एक बड़ा पत्ता तोड़ कर फूल के ऊपर रख देते हैं । धूप व पीलेपन से बचाने की इस क्रिया को ही ब्लांचिंग कहते हैं ।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases) :– कीट (Insect pests) :–

1. चैंपा (Aphid)– यह कीट पत्तियों एवं पौधे के अन्य भागों से रस चूसता है जिससे पत्तियाँ पीली पड़ने लगती है।

2. ग्रीन कैबेज वर्म (Green cabbage worm)

3. कैबेज लूपर (Cabbage looper)

ये दोनों (2,3) कीट पत्तियों को खाते हैं एवं उनकी आकृति बिगाड़ देते हैं।

रोकथाम – इन सभी (1,2व 3) कीड़ों की रोकथाम के लिए मैलाथियान का 1 मि.ली प्रति लीटर घोल का छिड़काव करें एवं आवश्यकतानुसार 15 दिन बाद फिर दोहराएं।

4 डायमण्ड बैक मोथ – इसके नियन्त्रण के लिए बीटीके (*बैसीलस थ्यूरीन्जेन्सिस कस्टकी*) 500 मि.ली. का एक हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें अथवा नीम के बीज (गुठली) के 40 ग्राम पाउडर को प्रति लीटर पानी की दर से घोल कर छिड़काव करें ।

व्याधियाँ (Disease):–

1. **आर्द्र गलन (Damping off)** – यह रोग पौधें में पौधशाला में ही लग जाता है। इसकी रोकथाम के लिए नर्सरी भूमि को बुवाई से पूर्व ''फार्मेलिन'' से उपचारित करें व बीजों को थायरम या कैप्टान 3 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचारित करना चाहिये। जल निकास की समुचित व्यवस्था करें।

2. **भूरी गलन या लाल सड़न रोग (Browning):–** इस रोग से प्रभावित गोभी के फूलो पर भूरे रंग के गोल धब्बे पड़ जाते हैं एवं उनमें सड़न पैदा हो जाती है।

रोकथाम: यह रोग बोरोन तत्व की कमी के कारण होता है। भूमि में रोपाई से पूर्व 10–15 किलोग्राम बोरेक्स प्रति हेक्टेयर की दर से मिलावें अथवा खड़ी फसल पर 2–3 ग्राम प्रति लीटर बोरेक्स का छिड़काव करके नियंत्रण किया जा सकता है।

दैहिक कियात्मक व्याधियाँ :–

1. बटनिंग (Buttoning):– पौधों के पूर्ण विकसित नहीं होने के कारण फूल छोटे रह जाते हैं। अगेती किस्मों की देर से रोपाई करने पर भी यह व्याधि उत्पन्न हो जाती है। वैसे नाइट्रोजन का भूमि में अभाव, इसका प्रमुख कारण है। समय पर पौधरोपण करें व नाइट्रोजन की भूमि में उचित मात्रा डालें।

2. व्हिप टेल (Whiptail):– अधिक अम्लीय भूमि में मोलिब्डेनम तत्व की कमी हो जाती है एवं इस कारण पत्तियों में मध्य शिरा का ही विकास होता है तथा चाबुकनुमा आकार में परिवर्तित हो जाती है। इसकी रोकथाम के लिए 1 किलोग्राम अमोनियम मोलीबडेट प्रति हेक्टेयर की दर से डालें व भूमि का पी. एच. मान 6.5 तक लायें।

तुड़ाई व उपज (Harvesting and Yield): – जब गोभी का खाने वाला भाग (कर्ड) पूर्ण आकृति व रंग ग्रहण कर ले तब इनकी कटाई करनी चाहिए । देर से कटाई करने पर रंग पीला पड़ने लगता है और फूल ढीले पड़ने लगते हैं । अगेती किस्म से 150 से 200 क्विंटल तथा मध्यम एवं पिछेती किस्म की फसल से 200–300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उत्पादन होता है।

पत्ता गोभी (Cabbage)

वानस्पतिक नाम *ब्रेसिका ओलेरेसिया एल.किस्म कैपीटाटा*

(*Brassica oleracea L.* var. *capitata*)

कुल : ब्रेसिकेसी (Brassicaceae)

पत्ता गोभी (*ब्रेसिका ऑलेरेसिया* किस्म *कैपीटाटा*), ब्रेसिकेसी कुल का शरद कालीन सब्जियों में फूल गोभी के बाद दूसरा स्थान है। इसे बन्द गोभी या करम कल्ला के नाम से भी जानते हैं । बन्द गोभी का प्रयोग सलाद, अचार, सब्जी, कड़ी के साथ–साथ सूखी सब्जी के रूप में भी करते हैं । यह पाचन शक्ति को बढ़ाती है। इसका सेवन मधुमेह रोगियों के लिए लाभदायक होता है । इसमें 2000 आईयू विटामिन ए तथा 124 मि.ग्रा. विटामिन सी पाया जाता है ।

जलवायु (Climate) – पत्ता गोभी अपेक्षाकृत ठंडी एवं नम जलवायु की फसल है । भारत में इसकी खेती मुख्य रूप से शरद ऋतु में ही की जाती है । यह पाले को काफी हद तक सहन कर सकती है तथा इसमें फूल गोभी की तुलना में अधिक पाला एवं निम्न तापमान को सहने की क्षमता इसमें होती है। गर्म तथा शुष्क मौसम में इसकी उपज, स्वाद तथा सुगंध में कमी आ जाती है। इसकी वृद्धि के लिए 12–18 डिग्री से. तापमान उपयुक्त रहता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation) – बन्द गोभी की खेती सभी प्रकार की मृदा में की जा सकती है । शीघ्र तैयार होने वाली फसल के लिए बलुई दोमट मिट्टी तथा देर से तैयार होने वाली फसल तथा अधिक उपज के लिए भारी मटियार दोमट मृदा अच्छी रहती है । मृदा पीएच मान 7–7.5 रहना चाहिए। पीएच 7 से नीचे होने पर पत्ता गोभी में क्लब गलन (जड़ गलन) रोग होने की संभावना बढ़ जाती है।

बुआई का समय एवं बीज की मात्रा (Time of sowing and seedrate) – अगेती किस्मों के लिए 500 ग्राम तथा पछेती किस्मों के लिए 300 ग्राम बीज एक हेक्टेयर खेती के लिए पर्याप्त है । अगेती किस्मों की बुआई अगस्त के अन्तिम सप्ताह से 15 सितम्बर तक करते हैं। मध्यमी और पिछेती किस्मों की बुआई सितम्बर मध्य से पूरे अक्टूबर तक करते हैं ।

उन्नत किस्में (Improved varieties)

अगेती किस्में – ये किस्में रोपाई के 60 से 70 दिन बाद तैयार हो जाती है । इनका हेड गोल व ठोस होता है । इनमें प्रमुख है – गोल्डन एकर, प्राइड ऑफ इण्डिया, कोपनहेगन मार्केट, सेप्टेम्बर, पूसा अगेती, आदि ।

पछेती किस्में – यह रोपाई के 100–120 दिन बाद तैयार हो जाती हैं। इनके तने छोटे व हैड चपटे तथा ठोस होते हैं । इनमें प्रमुख हैं – पूसा ड्रम हैड, रेड पत्ता गोभी, लेट लार्ज ड्रम हेड, पूसा मुक्ता आदि।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer)– खेत तैयार करते समय 25 से 30 टन प्रति हेक्टेयर सड़ी हुई गोबर की खाद भूमि में मिला दें । इसके अलावा 150 कि.ग्रा. नत्रजन, 80 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 75 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है । नत्रजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा पौध लगाने के समय भूमि में मिला दें। नत्रजन की शेष मात्रा पौध लगाने के 6 सप्ताह बाद देवें ।

सिंचाई (Irrigation) – पत्ता गोभी में नियमित सिंचाई की आवश्यकता होती है। रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करें इसके बाद 8–10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करे। जब फसल पूरी तरह तैयार हो जाए तब एक साथ अधिक सिंचाई न करे अन्यथा कल्ले फटने की संभावना रहती है।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations)– खरपतवारों की रोकथाम के लिए एवं भूमि की कड़ी परत तोड़ने के लिए खेत में 2–3 बार निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। रोपण के 35–40 दिन बाद पौधो पर मिट्टी चढ़ायें।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases) – इसमें कीट व व्याधियाँ एवं उनका नियंत्रण फूल गोभी के समान ही है।

तुड़ाई व उपज (Harvesting and Yield) – जब गाँठे 5–8 से.मी. व्यास की हो जाये तब ठोस एवं पूर्ण विकसित गोभी तुड़ाई के योग्य मानी जाती है। गाँठों की औसत उपज 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है ।

मटर (Peas)

वानस्पतिक नाम : *पाइसम सेटाइवम एल.* (*Pisum sativum L.*)

कुल : फेबेसी (Fabaceae)

मटर शरद ऋतु की एक महत्त्वपूर्ण शाक है। इसका सब्जी के रूप में तो उपयोग किया ही जाता है साथ कैनिंग, निर्जलीकरण एवं फ्रोजन मटर के रूप में काफी मात्रा को परिरक्षित भी किया जाता है। इसमें सुपाच्य प्रोटीन, विटामिन व कई खनिज लवण भी पाये जाते हैं।

जलवायु (Climate) – इसकी खेती के लिए ठण्डी जलवायु उपयुक्त रहती है । पाले से इसके फूल व फली को नुकसान पहुँचता है । बीज की बुआई के समय भूमि का तापमान 22^{o} से. होना चाहिए । इससे कम तापमान पर अंकुरण बहुत धीरे होता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation) : मटर की खेती विभिन्न प्रकार की मृदाओं से की जा सकती है लेकिन इसके लिए दोमट मृदा सबसे उपयुक्त रहती है। भारी मिट्टी जहाँ पानी का निकास अच्छा न हो वहाँ इसकी फसल अच्छी नहीं होती। इसकी खेती करने के लिए मृदा का पी.एच. मान 7.5 से अधिक नहीं होना चाहिए।

बुआई का समय एवं बीज की मात्रा (Time of sowing and seed rate) – मटर की अगेती किस्मों की बुआई अगस्त में तथा मुख्य फसल की बुआई अक्टूबर से नवम्बर में की जाती है । पंक्ति से पंक्ति व पौधों से पौधों के मध्य दूरी 30 x 10 से. मी. रखते हैं । अगेती फसल के लिए 100 – 120 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त है जबकि पछेती फसल के लिए 80–90 कि. ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है । बीजों को थायरम या कैप्टॉन से 3 ग्राम दवा प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके ही बोना चाहिए ।

उन्नत किस्में (Improved varieties):

अगेती किस्में – वी.एल. 3, अर्किल, हरा बौना, जवाहर मटर 3, जवाहर मटर 4, मटर अगेती 6, प्रमुख किस्में हैं, इनकी फलियाँ 50 से 60 दिन में आती हैं।

मुख्य फसल के लिए बोनविला, जवाहर मटर 1, पंजाब 88, आजाद पी 1, आर.पी. बी 15, पंत उपहार आदि प्रमुख किस्में हैं।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): – मटर एक दलहनी फसल है, परन्तु इसे अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा

अधिक पोषण की आवश्यकता होती है । खेत की तैयारी के समय मृदा में 20–25 टन गोबर की सड़ी हुई खाद व 20–30 कि.ग्रा. नत्रजन, 60–80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 50–60 कि.ग्रा. पोटाश मिला देना चाहिए ।

सिंचाई (Irrigation) : बीजो के अच्छे अंकुरण के लिए खेत में पलेवा करके ही बुआई करनी चाहिए। पहली सिंचाई बुआई के 4–5 सप्ताह बाद अथवा फूल निकलने के समय करें व दूसरी सिंचाई फली निर्माण के समय करनी चाहिए। मटर की फसल को अन्य सब्जियों की अपेक्षा कम पानी की आवश्यकता होती है।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations) : बुआई के लगभग 25–30 दिन बाद निराई – गुड़ाई करना आवश्यक होता है, आवश्यकतानुसार दूसरी बार भी यह क्रिया करें। खरपतवारों की रोकथाम के लिए बुआई के तुरन्त बाद पेण्डीमिथलीन व फ्लूक्लोरालिन (1.0–1.5 किलोग्राम) में से किसी एक का 650 लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव काफी प्रभावी रहता है ।

सहारा देना – मटर की खेती में यह एक महत्वपूर्ण अन्तराशस्य क्रिया है क्योंकि मटर लंबी बढ़ने वाली फसल है जिसको सहारे की आवश्यकता पड़ती है अन्यथा मटर की फली के भूमि के सम्पर्क में आने से उसकी गुणवत्ता खराब हो जाती है ।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases) :– 1. फली छेदक : यह कीट फलियों को काफी नुकसान पहुँचाता है। प्रकोपग्रस्त फलियों के दाने कुछ कट जाते है या पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं।

रोकथाम (1) क्षतिग्रस्त फलियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(2) **मेलाथियान** (0.1 प्रतिशत) या कार्बेरिल (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव 15–20 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए ।

2. पर्ण खनक – यह कीट पत्तियों में सुरंग बनाता है तथा पर्ण हरित की मात्रा को प्रभावित करता है प्रभावित पौधे की पत्तियाँ मुरझाकर सूख जाती हैं एवं पौधे की वृद्धि रूक जाती है।

रोकथाम – डाइमिथोएट 30 ईसी अथवा इमीडाक्लोरपीड का 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

व्याधियाँ (Diseases) : 1. **चूर्णी फंफूद** (Powdery mildew) : रोगग्रस्त भाग पर सफेद चूर्णी (फंफूद) धब्बे दिखाई देने लगते है। रोग की अधिक उग्रता पर पूरा पौधा सफेद चूर्णी धब्बों से ढक जाता है।

रोकथाम: (1) रोग ग्रस्त पौधे को उखाड़कर जला देवें।

(2) 25 किलोग्राम गन्धक का चूर्ण प्रति हेक्टेयर भुरकें अथवा कैराथियान 0.1 प्रतिशत का घोल छिड़के व आवश्यकतानुसार इसको दोहराएं।

2. जड़ गलन (Root rot) – इस रोग के प्रकोप से बीज अंकुरण के बाद पौध मरने लगते है। इसके रोकथाम के लिए बीजों को बुआई से पूर्व कैप्टान या मेन्कोजेब 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें।

तुड़ाई व उपज (Harvesting and Yield) : – फलियों की तुड़ाई का समय फसल की गुणवत्ता को बहुत अधिक प्रभावित करता है । फलियों की तुड़ाई सदा तब ही करनी चाहिए जब उसमें दाने बन गये हों तथा वह कोमल व मीठे हों। देरी से तुड़ाई करने पर दाने बेस्वाद हो जाते हैं क्योंकि दानों की शर्करा मांड में परिवर्तित हो जाती है । अगेती फसल से 30–40 क्विंटल तथा पछेती फसल से 70–80 क्विंटल हरी फलियाँ प्राप्त हो जाती है।

भिण्डी (Okra)

वानस्पतिक नाम *एबेलमोसकस एस्कुलेन्टस (एल.) मोइन्च*

Abelmoschus esculentus (L.) Moench.

कुल : मालवेसी (Malvaceae)

भिण्डी मालवेसी कुल की एक लोकप्रिय सब्जी जो देश के लगभग सभी भागों में उगाई जाती है। भिण्डी के हरे नर्म फल सब्जी एवं सूप के रूप में खाने के काम आते हैं। इसे भोजन के साथ सलाद के रूप में भी प्रयोग कर सकते हैं। विश्व के कुछ देशों में बीज का पाउडर बना कर ''कॉफी'' के स्थान पर इनका प्रयोग किया जाता है। इसकी जड़ व तना, गुड़ व शक्कर साफ करने में भी प्रयोग किये जाते हैं। यह स्वास्थ्य के लिए काफी लाभदायक है। दो चार ताजी भिण्डी प्रतिदिन खाने से पेट साफ रहता है। भिण्डी में 89.6 प्रतिशत पानी, 6.4 प्रतिशत कार्बोहाईड्रेट, 1.9 प्रतिशत प्रोटीन, 0.2 प्रतिशत वसा, 1.2 प्रतिशत रेशा तथा 66 मि.ग्रा./100 ग्राम फल कैल्सियम व 56 मि.ग्रा. फॉस्फोरस पाया जाता है।

जलवायु (Climate)–भिण्डी गर्म मौसम की फसल है। इसकी अच्छी उपज के लिए लम्बे समय तक गर्म एवं आर्द्र मौसम की आवश्यकता पड़ती है। इसकी खेती के लिए औसत तापक्रम 25 से 30°C से उपयुक्त पाया गया है। यदि तापमान 15°C से कम हो तो फल बनने पर बुरा असर पड़ता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation) : इसको विभिन्न प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है, किन्तु उचित जल निकास वाली जीवांश युक्त दोमट या बलुई दोमट मृदा इसकी खेती के लिए उत्तम होती है। मृदा का पीएच मान 6.5 से 7.5 उत्तम रहता है। यह हल्की क्षारीय मृदाओं मे आसानी से उगाई जा सकती है ।

बुआई, बीज की मात्रा एवं उपचार (Sowing, seed rate and seed treatment) – हमारे यहां इसकी दो फसलें ली जाती है । ग्रीष्म ऋतु की फसल की बुआई फरवरी–मार्च में करते हैं तथा वर्षाकालीन फसल की बुआई जून–जुलाई में करते हैं। जबकि दक्षिण भारत में इसकी खेती वर्ष भर की जाती है। ग्रीष्मकालीन फसल के लिए 12–15 कि.ग्रा. तथा वर्षाकालीन फसल के लिए 8–10 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। ग्रीष्म काल में कतार X पौधे की दूरी 30 X 20 या 45 X 30 रखते हैं जबकि वर्षाकाल में 45 X 30 या 60 X 30 से.मी. रखते हैं। बीज बोने से पूर्व कैप्टॉन या थायरम 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचार करें।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : परभनी क्रान्ति, पूसा सावनी, पूसा मखमली, अर्का अभय, अर्का अनामिका, वी. आर.ओ. 6 ।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) – खेत तैयार करते समय अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद 15 से 20 टन प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिला देवें। इसके अलावा 30 कि. ग्रा. नत्रजन 40 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 30 कि.ग्रा. पोटाश बुआई के पूर्व प्रति हैक्टेयर की दर से देवें। 30 कि.ग्रा. नत्रजन बुआई के एक माह बाद खड़ी फसल में दें।

सिंचाई (Irrigation): यदि भूमि में अंकुरण के समय पर्याप्त नमी न हो तो पहली सिंचाई बुआई के तुरन्त बाद कर दें। अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। सिंचाई मार्च से 10–12 दिन, अप्रैल में 7–8 दिन और मई–जून में 4–5 दिन के अन्तर पर करें। बरसात में यदि बराबर वर्षा होती है तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। वर्षा ऋतु में भिण्डी की फसल में ज्यादा पानी अधिक देर तक नहीं ठहरना चाहिए।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): अच्छी उपज के लिए खेत को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए। इसके लिये 2–3 निराई पर्याप्त होती है। खरपतवारों की रोकथाम के लिए खरपतवारनाशी दवा बासालिन (2 ग्राम/लीटर पानी) का उपयोग काफी प्रभावी होता है।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases) : (a) हरा तेला (Jassid) , मोयला (Aphid) एवं सफेद मक्खी (White fly) :– ये कीट पौधों के कोमल भागों विशेषकर पत्तियों से रस चूसकर पौधों को कमजोर बना देते हैं। ये कीट पौधों में कई व्याधियाँ फैलाने में भी सहायक होते हैं।

रोकथामः इनके नियन्त्रण हेतु डाइमिथोएट 30 ईसी या इमीडाक्लोरपीड का 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के घोल का छिडकाव करें एवं आवश्यकतानुसार इसे दोहराएं।

(b) फल छेदक – इस कीट की लटें फलों में घुसकर उन्हें खराब कर देती हैं जिससे फसल की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

रोकथाम : फूल आने के तुरन्त बाद . मैलाथियान 1 मि.ली प्रति लीटर या कार्बेरिल 2 मि.ली प्रति लीटर घोल का छिड़काव 15–20 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए ।

व्याधियाँ (Diseases):1. पीत शिरा मौजेक (Yellow mosaic virus)–यह रोग विषाणु द्वारा फैलता है जिसके कारण पौधों की बढ़ोतरी रुक जाती है। पत्तियाँ एवं शिराएँ पीली पड़ जाती है। जब तने और फलों का रंग पीला पड़ने लगे तो समझें की रोग का प्रकोप ज्यादा है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा एक पेड़ से दूसरे पेड़ तक पहुँचता है।

इनके नियन्त्रण हेतु डाइमिथोएट 30 ईसी या इमीडाक्लोरपीड का 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें व आवश्यकतानुसार इसे दोहराये।

2. छाछ्या (Powdery mildew) : प्रभावित पौधे की पत्तियों व तनों पर सफेद चूर्णी धब्बे दिखाई देते हैं। इस बीमारी की रोकथाम के लिए कैराथेन एल सी या केलिक्सिन 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

3. मूल ग्रन्थि (सूत्र कृमि) : इस रोग के कारण पौधो की जड़ों में गाँठे बन जाती है एवं उनकी वृद्धि रूक जाती है इसके नियन्त्रण हेतु बुआई से पहले 25 किलोग्राम कार्बोफ्यूरान 3 जी प्रति हेक्टेयर भूमि में मिलावें।

तुड़ाई व उपज (Harvesting and Yield) – भिण्डी के फलों की तुड़ाई नरम अवस्था में ही करनी चाहिए क्योकि कड़ा होने पर उसमें रेशे की मात्रा बढ़ जाती है एवं स्वाद खराब हो जाता है । फूल खिलने के 5–7 दिन बाद तोड़ने लायक हो जाते हैं। गर्मी की फसल से लगभग 50 क्विंटल तथा वर्षा की फसल से लगभग 100 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है ।

गाजर Carrot

वानस्पतिक नाम :*डॉकस कैरोटा एल.*
***(Daucus carota* L.)**

कुल : अम्बेलीफेरी (Umbelliferae or Apiaceae)

गाजर (*डॉकस कैरोटा*), अम्बेलीफेरी कुल की सब्जी है । गाजर की जड़ को कच्चा सलाद के रूप में, सब्जी बनाकर, हलवा, मुरब्बा और रायता के रूप में इस्तेमाल करते हैं । इसकी मुलायम पत्तियों का साग बना कर उपयोग किया जाता है । इसमें विटामिन ''ए'' और शर्करा प्रचुर मात्रा में पाई जाती है । यह भूख बढ़ाता है और गुर्दे के लिये लाभप्रद है । यदि किसान इसकी खेती ठीक तरीके से करे तो अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं और उपभोक्ता भी कम पैसों में अधिक पोषक तत्व प्राप्त कर सकता है ।

जलवायु (Climate) – गाजर ठण्डे जलवायु की फसल है लेकिन एशियाई किस्मों में अधिक तापमान सहने की शक्ति होती है । गाजर की जड़ का रंग और बढ़वार तापमान द्वारा प्रभावित होती है। इसकी बढ़वार और रंग के लिए 10–15 डिग्री से. तापमान उत्तम माना गया है । बहुत कम व अधिक तापमान पर गाजर का रंग हल्का व वृद्धि अनियमित होती है ।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation) : गाजर के लिए अच्छे जल निकास वाली जीवांश युक्त गहरी भुरभुरी व हल्की दोमट मृदा सर्वोत्तम होती है । मृदा पीएच मान 6–7 के मध्य उपयुक्त रहता है । भारी मृदा में जड़ विकास अवरूद्ध हो जाता है तथा जड़ों में शाखाएँ भी निकल आती है जिससे उनकी गुणवत्ता पर गहरा असर पड़ता है ।

मिट्‌टी को भुरभुरी बनाने के लिए खेत में 2 जुताई मिट्‌टी पलटने वाले हल से व 3–4 जुताई देसी हल से करके पाटा लगाएं।

बुआई, बीज की मात्रा एवं उपचार (Sowing, seed rate & seedtreatment) – राजस्थान प्रदेश में एशियाई किस्मों की बुआई अगस्त से अक्टूबर तक और यूरोपियन किस्मों की बुआई अक्टूबर–नवम्बर मे करते हैं । एक हेक्टेयर खेत के लिए 6–8 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है । इसकी बुआई या तो छोटी–छोटी समतल क्यारियों में या 30–45 से.मी. की दूरी पर बनी मेड़ों पर करते हैं । बुआई से पूर्व बीज को 12–24 घंटे तक पानी में भिगोकर बुआई करने से अंकुरण अच्छा होता है । बीज बोने से पूर्व उनका कैप्टान या थायरम 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचार करें।

उन्नत किस्में (Improved varieties): नेन्टेस, पूसा यमदग्नि, पूसा केसर, पूसा मेघाली, चैन्टने आदि।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): – एक हेक्टेयर खेत में लगभग 20–25 टन गोबर की सड़ी खाद बुआई के 3–4 सप्ताह पूर्व डाल कर अच्छी तरह मिट्‌टी में मिला देते हैं । गोबर की खाद का अच्छा सड़ा हुआ होना आवश्यक है। कच्ची खाद उपयोग में लाने से जड़े दो मुँह वाली (Forking) हो जाती है इसके अलावा 60 किलो नत्रजन, 40 किलो फॉस्फोरस एवं 120 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर की भी आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी मात्रा खेत की तैयारी के समय व आधी मात्रा बुआई के 45 दिन बाद खड़ी फसल में देवें।

सिंचाई (Irrigation): यदि बुआई के समय भूमि में नमी की कमी हो तो बुआई के तुरन्त बाद सिंचाई करें । बाद में सिंचाइयाँ गर्म मौसम में सप्ताह में एक बार और जब ठण्ड पड़ने लगे तो 10–12 दिन में एक बार करते हैं । इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि खेत सूखने और सख्त होने न पाये नहीं तो जड़ों का समुचित विकास नहीं हो पाता । सिंचाई हमेशा हल्की करनी चाहिए ।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): फसल के बढ़ने के साथ ही निराई गुड़ाई करें व पौधों की छँटाई भी करें ताकि जड़े अच्छी बन सके। खरपतवारों की रोकथाम के लिए स्टोम्प नामक खरपतवारनाशी दवा की 3.5 लीटर मात्रा को 700–800 लीटर पानी में घोलकर बीजाई के तुरन्त बाद छिड़के।

कार्यिकी विकार

स्प्लीटिंग (विभाजन)

यह गाजर का महत्वपूर्ण विकार है, जिसमें गाजर की जड़ फट जाती है । यह विकार आनुवांशिक होता है । साथ ही कई पर्यावरणीय कारक भी है जैसे जड़ों के किनारों पर ज्यादा नत्रजन की मात्रा देना, मृदा में क्लोराइड आयन की कमी, दूरी अधिक रखना, जड़ का ज्यादा बढ़ना तथा सिंचाई में अनियमितता ।

इसके नियन्त्रण के लिए सहिष्णु किस्मों का चयन करें, पौधे में दूरी कम रखें । नत्रजन की सन्तुलित मात्रा दें तथा भूमि में समुचित जल की मात्रा रखें तथा जड़ों को सही अवस्था में उखाड़ लें ।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases):–

व्याधियाँ (Diseases) : **छाछ्या रोग :–** इस रोग से प्रभावित पौधे की पत्तियों व तनों पर सफेद छोटे–छोटे धब्बे पड़

जाते हैं तथा बाद में पूरे पौधे पर फैल जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए कैराथियान एल सी. 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़कें।

पत्ती धब्बा रोगः– इस रोग से ग्रसित पत्तियों पर गोल पीले धब्बे पड़ जाते हैं व इसके कारण पत्तियाँ झुलस जाती हैं। इस फफूंद जनक रोग की रोकथाम के लिए मेन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से पौधों पर छिड़के।

तुड़ाई व उपज (Harvesting and Yield): जब जड़ें पूर्ण आकार की हो जाती हैं तो उनकी खुदाई करते हैं । आमतौर पर गाजर की जड़ें 100 – 130 दिनों में खुदाई के लिए तैयार हो जाती हैं। खुदाई करने से पहले हल्की सिंचाई कर दें। खुदाई खुरपी या फावड़े से करें। औसत उपज लगभग 200–300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो जाती है ।

मूली (Radish)

वानस्पतिक नाम : *रेफनस सेटाईवस एल.* (*Raphanus sativus* L.)

कुल : ब्रेसिकेसी (Brassicaceae)

मूली ब्रेसिकेसी कुल की जड़ वाली सब्जी है । यह शीतलता प्रदान करने वाली (ठंडी तासीर), कब्ज दूर करने वाली, भूख बढ़ाने वाली सब्जी है, जिसका उपयोग सलाद, अचार तथा केण्डी बना कर किया जाता है । बवासीर, पीलिया और जिगर की बीमारी मे इसका उपयोग अत्यधिक लाभदायक है । मूली में विटामिन ''ए'' और ''सी'' तथा खनिज लवण, फस्फोरस प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं । यह शीघ्र तैयार होने वाली फसल है। इसकी जड़ो में गंधक, कैल्सियम तथा फॉस्फोरस मुख्य रूप से होता है।

जलवायु (Climate) – मूली मुख्य रूप से ठण्डे मौसम की फसल है परन्तु एशियाई किस्में यूरोपियन किस्मों की अपेक्षा अधिक गर्मी सहन कर सकती है । ज्यादा तापमान होने पर मूली की जड़ें कठोर तथा चरपरी हो जाती हैं। सर्वोत्तम गन्ध ा, स्वाद एवं संरचना के लिए 12–15 डिग्री से. तापमान उत्तम माना गया है ।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation): मूली की सफल खेती के लिए जीवांश युक्त, अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। भारी मिट्टी इसके लिए अनुपयुक्त मानी जाती है क्योंकि उसमें जड़ों का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है।मूली के लिए भुरभुरी मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसके लिए एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 जुताई देशी हल से करें। जुताई के बाद पाटा अवश्य लगाएं।

बुआई, बीज की मात्रा एवं उपचार (Sowing, seed rate and seed treatment) – उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में एशियाई मूली बोने का मुख्य समय सितम्बर से फरवरी तथा यूरोपियन किस्मों की बुआई अक्टूबर से जनवरी तक करते हैं ।

एशियाई किस्मों की 6–8 किलोग्राम और यूरोपियन किस्मों की 8–10 किग्रा. प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है । बीज बोने से पूर्व उनका कैप्टान या थायरम 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचार करें।

बुआई के समय खेत में नमी अच्छी प्रकार होनी चाहिए । खेत में नमी की कमी होने पर पलेवा करके खेत तैयार करते हैं । इसकी बुआई या तो छोटी–छोटी समतल क्यारियों में या 30–45 से.मी. की दूरी पर बनी मेड़ों पर करते हैं ।

उन्नत किस्में (Improved varieties):

यूरोपियन किस्में – व्हाइट इसीकिल, रेपिड रेड व्हाइट

एशियाई किस्में – जापानी व्हाइट, पूसा हिमानी, पूसा चेतकी, पूसा देशी, पूसा रेशमी, पंजाब सफेद, अर्का निशान्त ।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): – मूली शीघ्र तैयार होने वाली फसल है । भूमि में पर्याप्त मात्रा में खाद व उर्वरक होना चाहिए । अच्छी पैदावार के लिए एक हेक्टेयर खेत में 20–25 टन अच्छी प्रकार सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट बुआई से 25–30 दिन पूर्व प्रारम्भिक जुताई के समय खेत में मिला दें इसके अतिरिक्त 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 45 कि. ग्रा. फास्फोरस और 45 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता पड़ती है । नत्रजन की आधी मात्रा व फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के पहले खेत में डाल दें । शेष आधी नत्रजन की मात्रा बुआई के 20 दिन बाद शीतोष्ण किस्मों में और 25–30 दिन बाद एशियाई किस्मों में टॉप ड्रेसिंग के रूप में दें ।

सिंचाई (Irrigation): वर्षा ऋतु की फसल में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती परन्तु गर्मी की फसल के 4–5 दिन

के अन्तर पर सिंचाई अवश्य करते रहना चाहिए । शरदकालीन फसल में 10–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करते हैं ।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): प्रभावी खरपतवार नियंत्रण के लिए मूली के खेत में 2–3 निराई गुड़ाई करें। जड़ बनते समय उन पर एक बार मिट्टी अवश्य चढ़ा दें।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases):– मूली की फसल को माहू, सरसों की आरा मक्खी तथा पत्ती काटने वाली सूंडी काफी हानि पहुँचाती है ।

मैलाथियान 50 ईसी को 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए ।

व्याधियाँ (Diseases) : **सफेद रोली** :– इस रोग से प्रभावित पत्तियों की निचली सतह पर धब्बे दिखने लगते हैं। इसकी रोकथाम हेतु मैन्कोजेब का 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

खुदाई व उपज (Harvesting and Yield): मूली को हमेशा नरम और मुलायम अवस्था में उखाड़ना या खोदना चाहिए । मूली की खुदाई एक तरफ से न करके तैयार जड़ों को छाँट कर करें । पूसा चेतकी किस्म की जड़ें 40 से 45 दिन में तैयार हो जाती है । उचित देखभाल में यूरोपियन किस्म की 80–100 क्विंटल तथा एशियाई किस्म की 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त हो जाती है ।

पालक (Beetleaf)

वानस्पतिक नाम : *बिटा वल्गेरिस किस्म बेन्गालेन्सिस* (*Beta vulgaris var.bengalensis Roxb*)

कुल : चीनोपोडिएसी (Chenopodiaceae)

हरी पत्ते वाली सब्जियों मे पालक का एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें विटामिन ''ए'' व खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाए जाते है। इसके लगातार सेवन से रतौधीं रोग समाप्त हो जाता है। गृह वाटिका (Kitchen garden) के लिए यह सर्वोत्तम सब्जी है।

जलवायु (Climate) : कम तापमान वाले क्षेत्रों में पालक वर्ष भर सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है लेकिन शरद ऋतु में यह अच्छा पनपता है। इसलिए मुख्यतः इसकी खेती सर्दी में ही की जाती है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation): पालक की खेती सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है परन्तु अच्छे जल निकास वाली, जीवांश युक्त बलुई दोमट मिट्टी इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम है। भूमि का पी. एच.मान 6–7 के लगभग उपयुक्त रहता है।

बुआई, बीज की मात्रा एवं उपचार (Sowing, seed rate and seed treatment) – बुआई से पूर्व पलेवा कर मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई कर दो बार कल्टीवेटर से गहरी जुताई करें व प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगायें। 30–40 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है। बीज बोने से पूर्व उनका कैप्टान या थायरम 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचार करें।

उन्नत किस्में (Improved varieties): पूसा ज्योति, पूसा हरित, पन्त कम्पोजिट, आल ग्रीन, अर्ली ग्रीन, एस–23, अर्ली स्मूथ लीफ ।

बुआई का समय व विधि (Sowing time and method) : बीजों को प्रायः समतल खेत में छिड़कवा विधि से बोते है। परन्तु पंक्तियों में बोना अधिक लाभप्रद है। पंक्तियों की दूरी 20 से 25 से.मी. बाद में विरलीकरण द्वारा पंक्ति में पौधों में पौधों की दूरी 5 से 8 से.मी. रखते हैं तथा बीज को 2 से 3 से.मी. गहराई पर बोते हैं । पहली सिंचाई बीज जमने के बाद करते हैं और बाद में 8–10 दिन के अन्तर पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करें । पौधे जब 15 से 20 दिन के हो जाएं तब पहली निराई व गुड़ाई करनी चाहिए ।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): – पालक की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए बुआई से पहले 200–300 क्विंटल गोबर की खाद 100 किलो नत्रजन, 40 किलो फॉस्फोरस व 40 किलो पोटाश प्रति हैक्टर के हिसाब से भूमि में मिलावें। 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से नाइट्रोजन हर कटाई के बाद खड़ी फसल में दें।

सिंचाई (Irrigation): बुआई के तुरन्त बाद सिंचाई करें। हरी पत्ती वाली सब्जी होने के कारण भूमि में पर्याप्त नमी बनी रहनी चाहिये। 5–6 दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहे।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): बुआई के 2–3 सप्ताह बाद प्रथम निराई– गुड़ाई की जानी चाहिए व इसी समय पौधों का अन्तराल भी ठीक करें।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases):–

कीट (Insect pests)

चेंपा (Aphid): यह पत्तियों का रस चूसकर फसल को नुकसान पहुँचाता है। इसके नियंत्रण हेतु मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण 20 से 25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव करें। भुरकाव के तुरन्त बाद कटाई न करें।

व्याधियाॅ (Diseases) :

आर्द्रगलन व्याधियाँ (Damping off) – इस रोग से प्रभावित कोमल पौधों के तने भूमि के निकट से गलने लगते हैं।इसकी रोकथाम के लिए बुआई से पूर्व बीज को 3 ग्राम थायरम नामक दवा से प्रति किलो बीज दर से उपचारित करें।

पत्ती धब्बा (Leaf spot) – इस रोग के कारण पत्तियों पर भूरे धब्बे पड़ जाते हैं। इस रोग के नियंत्रण हेतु जाइनेब 2 ग्राम या मेंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें व 15 दिन के अन्तर पर फिर छिड़काव करें।

खुदाई व उपज (Harvesting and Yield): पत्तियों की कटाई उनकी कोमल एवं रसीली अवस्था में करनी चाहिए। पालक की औसतन 4–8 कटाई की जा सकती है एवं 100–150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर औसत उपज प्राप्त की जा सकती है।

प्याज (Onion)

वानस्पतिक नाम – *एलियम सेपा* एल. (*Allium cepa L.*)

कुल – एलिएसी (Alliaceae)

प्याज (*एलियम सेपा*), ऐलिएसी कुल की एक नगदी फसल है जो प्रायः सर्दियों में उगाई जाती है ।इसका उपयोग हरी अवस्था में सब्जी के रूप में तथा पकने पर कच्चे सलाद, सब्जी, अचार, मसाले, चटनी व दाल को फ्राई करने में किया जाता है । इसमें मुख्य रूप से फॉस्फोरस, कैल्सियम, विटामिन सी आदि प्रमुख पौष्टिक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं । प्याज में एलाइल प्रोपाइल डाइसल्फाइड की वजह से इसमें रोचक सुगन्ध होती है । यह गर्मी में लू लग जाने तथा गुर्दे की बीमारी वाले रोगियों के लिए लाभदायक पाया जाता है ।

जलवायु (Climate) –

प्याज एक ठंडे मौसम की फसल है जो कि 13 – 24^0 सेल्सियस तापमान में अच्छा उत्पादन देती है । यह पाले को भी सहन करने की क्षमता रखती है । प्याज वृद्धि एवं उपज को तापमान एवं प्रकाशकाल बहुत अधिक प्रभावित करते है। अच्छा कन्द बनने के लिए लम्बा दिन तथा तापमान अधिक (35–40^0 सेल्सियस) होना अच्छा होता है ।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation): प्याज सभी प्रकार की भूमि में उगायी जा सकती है लेकिन बलुई दोमट/दोमट जिसमें जीवांश खाद प्रचुर मात्रा में हो तथा जल निकास की उत्तम व्यवस्था हो उपयुक्त पायी गई है । भूमि अधिक क्षारीय व अम्लीय नहीं होनी चाहिए अन्यथा कन्दों की वृद्धि अच्छी नहीं हो पाती है । भूमि में गन्धक की कमी हो तो जिप्सम 400 ग्राम/हेक्टेयर बुआई के 15–20 दिन पहले मिट्टी में मिलाना चाहिए ।

बुआई, बीज की मात्रा एवं उपचार (Sowing, seed rate and seed treatment) –

बुआई – रबी की फसल के लिए बीज, मध्य अक्टूबर से लेकर मध्य नवम्बर तक बोये जा सकते हैं । प्याज को उसके बीज या कन्दों को बोकर उगाया जाता है । एक हेक्टेयर फसल के लिए 10 कि.ग्रा. बीज (रबी फसल) व 12–15 कि.ग्रा. (खरीफ फसल) पर्याप्त रहते हैं । पौध व कन्द तैयार करने के लिए बीज को 5–6 से.मी. की दूरी पर 0.5 से.मी. की गहराई पर बोएं व उन्हें घासफूस से ढक दें । उसके बाद झारे से पानी दें ।

रोपना – पौध लगभग 7–8 सप्ताह में रोपाई योग्य हो जाती है । जब पौधे 12–15 से.मी. लम्बाई के हो जाएं तो उन्हें 15 से.मी. कतार से कतार व 10 से.मी. पौधे से पौधे की दूरी पर क्यारियों में रोपण करें । पौध रोपण के समय पौधों को बाविस्टीन (2 ग्राम/ली.) के घोल में 15–20 मिनट डुबो कर रोपाई करें ताकि गुलाबी जड़ गलन रोग से फसल को बचाया जा सके । रबी फसल के लिए पौधरोपण का समय 15 दिसम्बर से 15 जनवरी तथा खरीफ फसल के लिए जुताई के अन्तिम सप्ताह से अगस्त तक है । इन फसलों में देरी या पहले करने से फूल निकल आते हैं।

कन्दों की बुआई – कन्दों की बुआई 45 से.मी. की दूरी पर बनी मेड़ों पर 10 से.मी. की दूरी पर दोनों तरफ करनी चाहिए । छोटे कन्दों के लिए (1.5 – 2.0 से.मी.) 10 क्विंटल/हेक्टेयर तथा बड़े कन्दों के लिए (2.0 – 2.5 से.मी.) 12–15 क्विंटल/हेक्टेयर की आवश्यकता पड़ती है । रोपाई या बुआई के तुरन्त बाद एवं उसके 3–4 दिन बाद हल्की सिंचाई अवश्य करें ।

उन्नत किस्में (Improved varieties):

रबी फसल हेतु –

लाल प्याज – पूसा रेड, एग्रीफाउण्ड डार्क रेड, पंजाब रेड राउण्ड, हिसार – 2, एन – 53, अर्का कल्याण

सफेद प्याज – पूसा व्हाइट फ्लेट, पूसा व्हाइट राऊण्ड, उदयपुर – 102, पंजाब 48

पीली प्याज – अर्का पीताम्बर, अर्ली ग्रेनो

खरीफ फसल हेतु –अर्का कल्याण, एन – 53

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): – प्याज की खेती के लिए सड़ी हुई गोबर की खाद/वर्मी कम्पोस्ट 400 – 500 क्विंटल/हेक्टेयर खेत तैयार करते समय मिला दें । इसके अलावा 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 50 कि.ग्रा. फास्फोस तथा 100 कि.ग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है । नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई से पहले अन्तिम जुताई में मिला देनी चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा रोपाई के 45 दिन बाद खड़ी फसल में दें ।

सिंचाई (Irrigation): बीजों की बुआई अथवा पौध रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई आवश्यक है। कन्द बनते समय सिंचाई करना अति आवश्यक है। इस समय नमी की कमी से कन्द फटने लगते हैं एवं उपज घट जाती है। सर्दी में सिंचाई लगभग 10–15 दिनों बाद व ग्रीष्म में प्रति सप्ताह सिंचाई आवश्यक होती है। फसल तैयार होने पर शीर्ष पीले पड़कर गिरने लगे तब सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): प्याज की अधिक उपज के लिए खेत को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। यह एक उथली जड़ों वाली फसल है अतः गहरी निराई – गुड़ाई न करें अन्यथा जड़ों का क्षतिग्रस्त होने का भय रहता है। अच्छी फसल के लिए दो–तीन बार खरपतवार निकालना आवश्यक होता है।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases):–

पर्णजीवी (थ्रिप्स) – कीड़े छोटे और पीले रंग के होते हैं जो पत्तियों का रस चूसते हैं । पत्तियाँ कमजोर हो जाती है तथा पत्तियों पर सफेद चकते पड़ जाते हैं । नियन्त्रण हेतु थायोमिथाक्सिन 0.5 ग्राम/ली. पानी की दर से छिड़काव करें।

व्याधियाँ (Diseases) :

तुलासिता – इस रोग में पत्तियों की निचली सतह पर सफेद रुई जैसी फफूंद की वृद्धि दिखाई देती है । नियन्त्रण हेतु मैन्कोजेब 2 ग्राम/ली. पानी में घोल बनाकर छिड़कें ।

परपल ब्लाच – यह रोग *अल्टरनेरिया पोराई* नामक फफूंद से होता है। प्रभावित पत्तियों और तनों पर छोटे–छोटे गुलाबी धब्बे पड़ जाते हैं। प्याज की गाँठें भण्डारण में सड़ने लगती हैं। नियन्त्रण हेतु क्लोरोथेलोनिल 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल कर 10 दिन के अन्तर पर छिड़कें।

खुदाई एवं उपज (Harvesting and Yield): – बीजों से तैयार की गई फसल 140–150 दिन में तथा कन्दों से लगाई गई फसल 100 – 110 दिन में पक कर तैयार हो जाती है । रबी की फसल तैयार होने पर पत्तियों के शीर्ष पीले पड़ कर सूख जाते हैं तब सिंचाई रोक दें व इसके 10–15 दिन बाद खुदाई करें । खरीफ फसल में पत्तियाँ गिरती नहीं है । जब गाँठों का आकार 6–8 सेमी. व्यास का हो जाए तो पत्तियों को पैरों से जमीन पर गिरा दें ताकि पौधों की वृद्धि रूक जाए व गाँठें ठोस हो जाए । 15 दिन बाद खुदाई करें । रबी कन्दों की खुदाई के बाद इन्हें 3–5 दिन तक खरीफ कन्दों को 10–15 दिन तक पत्तों सहित छाया में रखें । फिर 2 – 2.5 से.मी. ऊँचाई कन्दों में छोड़ कर पत्तों की कटाई करें । इन्हें 5 – 7 दिन हवादार जगह में रखें । साधारणतया 250 – 300 क्विंटल/हेक्टेयर की दर से प्याज की पैदावार की जा सकती है ।

भण्डारण – प्याज के कन्दों को अच्छी तरह से छायादार स्थान पर सुखाने के बाद हवादार कमरों में फैला कर रखना चाहिए । भण्डारण से पूर्व कटे, सड़े, गले, रोगी कन्दों को निकाल देना चाहिए ।

लहसुन (Garlic)

वानस्पतिक नाम : *एलियम सेटाइवम एल.* (*Allium sativum L.*)

कुल : एलिएसी (Alliaceae)

लहसुन (*एलियम सेटाइवम*), एलिएसी कुल की एक नगदी फसल है। मसाला के रूप में लहसुन की गाँठों एवं सूखी फाँके, लहसुन के चूर्ण व पेस्ट के रूप में, भोज्य पदार्थों का स्वाद बढ़ाने, चटनी, अचार, टमाटर केचप इत्यादि में किया जाता है । लहसुन में एलिसिन नामक सक्रिय तत्व पाया जाता है जो जैव प्रतिरोधी का काम करता है । इसका तेल लकवा व अल्सर आदि विकारों को दूर करने, कृमिनाशक व टॉनिक के रूप में होता है । लहसुन का उपयोग उच्च रक्तचाप में, धमनीय दाब कम करने में भी होता है । इसमें फास्फोरस, विटामिन सी व अन्य प्रमुख तत्व पाए जाते हैं ।

जलवायु (Climate) – लहसुन की खेती विभिन्न प्रकार की जलवायु में की जा सकती है । इसकी खेती मुख्यतः शरद ऋतु में की जाती है । इसकी फसल के लिए अत्यधिक गर्मी एवं ठंड अनुकूल नहीं होती है । फाकों के फुटाव के लिए 15 डिग्री सेल्सियस तापमान अतिउत्तम होता है ।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and Field preparation): लहसुन की खेती के लिए उपजाऊ दोमट या रेतीली दोमट पी.एच. मान 6.5 से 7.0 जीवांशयुक्त तथा उचित निकास वाली मृदा उपयुक्त रहती है । जबकि लहसुन की खेती लगभग सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है । खेत की तैयारी के लिए एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा दो जुताई देशी हल से करने के बाद पाटा लगावें।

बुआई, बीज की मात्रा एवं उपचार (Sowing, seed rate & seed treatment) – लहसुन की बुआई के लिए गाँठों से जुड़ी हुई कलियों का प्रयोग करते हैं। 400 से 500 कि.ग्रा. कलियाँ/हेक्टेयर क्षेत्र के लिए आवश्यकता पड़ती है। उचित उपज के लिए 6–8 ग्राम भार की कलियाँ उपयुक्त रहती हैं । इसकी बुवाई का समय अक्टूबर से नवम्बर तक है । बुआई से पूर्व कलियों को डायथेन एम. –45 नाम की फफूंदनाशी दवा से उपचारित कर लें।

उन्नत किस्में (Improved varieties):

1. बड़ी गाँठों वाली किस्में– फावरी, सोलन, राजेलीगादी, जी–1, जी–50, जी–51, जी–282

उतर भारत मे उगायी जाने वाली अन्य किस्मे:–

हिसार स्थानीय, लाडवा, को 2, अगेती कुआंरी

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): – अच्छा फसल उत्पादन प्राप्त करने के लिए खेत की तैयारी के समय 200 से 250 क्विंटल/हेक्टेयर की दर से गोबर की अच्छी सड़ी खाद खेत में अच्छी तरह मिला देते हैं । इसके अलावा नाइट्रोजन 100–125 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 50 कि.ग्रा. और पोटाश 50 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से तत्व के रूप में देना चाहिए। नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा और फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुआई से पहले तथा शेष नाइट्रोजन दो बराबर भागों में बाँट कर बुआई के 40 और 60 दिन बाद खड़ी फसल में टॉपड्रेसिंग के रूप में दें ।

सिंचाई (Irrigation): लहसुन की कलियों की रोपाई के बाद हल्की सिंचाई करें इसके पश्चात् 8–12 दिन के अन्तराल से सिंचाई करते रहे।

निराई–गुड़ाई (Interculture operations): बुआई के 20–25 दिन बाद पहली निराई गुड़ाई एवं दूसरी निराई गुड़ाई पहली निराई गुड़ाई के एक माह पश्चात् करनी चाहिए। फसल में गहरी गुड़ाई न करें।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases):– कीट एवं रोग नियंत्रण प्याज के समान।

खुदाई एवं उपज (Harvesting and Yield): – लहसुन की ऊपरी पत्तियाँ जब पीली पड़ कर गिरने लगे या सूख जाएं तब खुदाई करनी चाहिए । इस वक्त गाँठें भी जमीन के ऊपर दिखाई देने लगती हैं । लहसुन की फसल पकने में 5–6 माह का समय लगता है । गाँठों को पत्तियों सहित उखाड़ लिया जाता है । गाँठों को 3–4 दिन तक छाया में सुखाने में बाद पत्तियों को गर्दन से 2–3 से.मी. छोड़ कर काट देते हैं या 25–30 लहसुन की पत्तियों को बांध कर गुच्छियाँ बना लेते हैं । औसत उपज 80–100 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर प्राप्त होती है । लहसुन का भंडारण गुच्छियों के रूप में या कन्दों को टाट की बोरियों में रख कर कर सकते हैं । भंडारण शुष्क, हवादार व ठंडी जगह पर करना चाहिए । कलियों के अंकुरण को रोकने के लिए मैलिक हाइड्राजाइड नामक नियामक (600 ग्राम का 200 ली. पानी में घोल बना कर प्रति एकड़) के घोल का छिड़काव जब पत्तियाँ हरी रहती हैं, करते हैं ।

कद्दू (कूष्माण्ड) वर्गीय सब्जियाँ
Vegetables of Cucurbitaceae Family

कद्दू वर्गीय सब्जियाँ कुकुरबिटेसी कुल के अन्तर्गत आती हैं। सब्जियों में कद्दूवर्गीय सब्जियाँ अपना विशेष स्थान रखती हैं। इसकी उपलब्धता वर्ष में लगभग 9–10 महीने रहती है । आर्थिक दृष्टिकोण से इनकी महत्ता अधिक है । इनका उपयोग कच्चा सलाद (खीरा, ककड़ी), पका कर सब्जी के रूप में लौकी, नेनुआ, तोरई, करेला, काशीफल, परवल, कुंदरू, चिचिन्डा, छप्पन कद्दू, मीठे फल के रूप में तरबूज, खरबूज, मिठाई बनाने में पेठा, परवल, लौकी, अचार बनाने में करेला आदि का प्रयोग होता है । इस कुल की कई सब्जियों में औषधीय गुण भी पाये जाते हैं । लौकी व करेले का जूस क्रमशः मोटापे व मधुमेह दूर करने के लिए दिए जाते हैं ।

वानस्पतिक नाम –

कूष्माण्ड कुल की कुछ महत्वपूर्ण सब्जियों के वानस्पतिक नाम –

तरबूज	–	*सिट्रुलस लैनेटस (थन्ब)नेटसम एंड नकाई*
खरबूजा	–	*कुकुमिस मेलो एल.*
फूट	–	*कुकुमिस मेलो एल.* किस्म *मोमोरडिका*
ककड़ी	–	*कुकुनिस मेलो एल.* किस्म *यूटिलिसिमस*
टिण्डा	–	*सिट्रुलस लेनेटस एल.फिस्चुलोसस*
लौकी	–	*लेजिनेरिया सिसेरिया (मोल) स्टैंड्ल*
खीरा	–	*कुकुमिस सेटाइवस एल.*
आरा तोरी	–	*लूफा एक्यूटैंगला (एल.)राक्सब*
नेनुआ चिकनी तुरई	–	*लूफा सिलिन्ड्रिका एल.*
करेला	–	*मोमोर्डिका चरनेशिया एल.*
काशीफल	–	*कुकरबिटा मोस्चाटा (डच) पोइर*
छप्पन कद्दू	–	*कुकुरबिटा पेपो एल.*
पेठा	–	*बेनिनकासा हिस्पिडा (थम्ब) काग्न*

उन्नत किस्में –

तरबूज – शुगर बेबी, आसाही यामेटो, दुर्गापुरा मीठा, दुर्गापुरा केसर, अर्काज्योति (संकर किस्म), मधु, आर डब्ल्यु 187–2, एनएस 295, सुरभि, खुशबू, सुगन्ध

खरबूजा – दुर्गापुरा मधु, पंजाब सुनहरी, पंजाब हाइब्रिड–1, अर्काजीत, हरा मधु, पूसा मधुरस, आरएम 43, आरएम 50, एमएचवाई 3, एमएचवाई 5, एनएल 7455

चिकनी तुरई – पूसा चिकनी (गलगल तुरई), सलेक्शन 99,

धारीदार तुरई – पूसा नसदार, सीओ 1

खीरा – बालम खीरा, पाइनसेट, पूसा संयोग (संकर किस्म), जापानी लांग ग्रीन, स्ट्रेट एट, चाइना

करेला – कोयम्बटूर लॉंग, पूसा दो मौसमी, प्रिया, अर्काहरित, पूसा विशेष, मटिको करेला, ग्रीन लोंग ।

टिण्डा – बीकानेरी ग्रीन, दिल पसन्द, टिण्डा लुधियाना (एस 48) हिसार सलेक्शन 1, अर्का टिण्डा

ककड़ी – लखनऊ अगेती, अर्का शीतल

लौकी – पूसा समर प्रोलोफिक लोंग, पूसा समर प्रोलोफिक राउण्ड, पूसा मंजरी पूसा मेघदूत, पूसा नवीन, अर्का बहार, थार समृद्धि

कद्दू (काशीफल) – पूसा विश्वास, पूसा अलंकार, अर्का चंदन

मृदा एवं जलवायु (Soil & Climate)– इन सब्जियों को सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है फिर भी दोमट तथा बलुई दोमट मृदा विशेष रूप से उपयुक्त पायी गई है । मृदा में जैविक पदार्थ पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए तथा जल निकास का समुचित प्रबन्ध होना चाहिए । इनकी खेती नदियों के किनारे भी की जाती है । मृदा का पीएच मान 6–8 के मध्य होना चाहिए। मुख्य रूप से कद्दू वर्गीय सब्जियां गर्म जलवायु की फसलें हैं । इनमें ज्यादा ठंड व पाला सहन करने की क्षमता नहीं होती है । इनकी खेती के लिए सर्वाधिक तापमन 40 डिग्री से. तथा न्यूनतम 20 डिग्री से. है । खीरा, लौकी तथा कद्दू के लिए उपयुक्त तापमान 20 – 25 डिग्री से. है जबकि खरबूज व तरबूज के लिए 40 डिग्री से. एवं इससे अधिक तापमान साथ ही तेज धूप तथा शुष्क मौसम फलों में मिठास बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है । तरबूज और खरबूज में फल पकते समय वर्षा होने पर स्वाद में फीके हो जाते हैं । टिण्डा, फूट, ककड़ी व लौकी बरसात के मौसम में भी लगाये जाते हैं ।

बुआई का समय (Time of sowing)– तरबूज, खरबूज व ककड़ी की बुआई फरवरी–मार्च में की जाती है । वहीं तुरई, खीरा, लौकी, कद्दू, करेला तथा टिण्डे की ग्रीष्मकालीन फसल के लिए बुआई फरवरी – मार्च में तथा वर्षाकालीन फसल के लिए जून–जुलाई में करना चाहिए । नदी तट पर बुआई का उत्तम समय नवम्बर से फरवरी के मध्य करते हैं । बीज को अंकुरण के लिए उपयुक्त तापमान पहुँचाने के लिए गोबर की खाद डाल कर तापमान में वृद्धि कराते हैं तथा पाले से बचाने के लिए पौधे के चारों तरफ कूचे की दीवार बनाई जाती है ।

बीज दर व दूरी (Seed rate and distance)–

सब्जी	बीज दर किग्रा/हैक्टेयर	दूरी (कतार x पौध)
लौकी	4 – 5	2.5–3 x 0.75 मी.
कद्दू	4 – 5	3.4 x 1.25 मी.
करेला	4 – 5	1.25 x 0.50 मी.
तरबूज	4.5 – 5	2.5 x 1.00 मी.
खरबूज	1.5 – 2	2.0 x 0.6 मी.
तुरई	4 – 5	1.0 x 0.6 मी.
खीरा	2 – 2.5	1.5 x 0.5 मी.
ककड़ी	2	2.5 x 0.5 मी.
टिण्डा	4.5	2.0 x 0.75 मी.

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) – गोबर की सड़ी खाद/वर्मी कम्पोस्ट 20–25 टन/हेक्टेयर खेत में बीज बोने के 3–4 सप्ताह पहले भूमि तैयार करते समय अच्छी तरह

मिला देते हैं । इसके अलावा 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकता पड़ती है । देशी खाद, फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की 1/3 मात्रा अर्थात 30 कि.ग्रा. नत्रजन बुआई के समय भूमि में मिला कर देवें तथा शेष नत्रजन की मात्रा को दो बराबर भाग में बाँट कर टॉप ड्रेसिंग (खड़ी फसल में) के रूप में प्रथम बार बुआई के 25 से 30 दिन बाद व दूसरी बार फूल आने के समय देना चाहिए ।

सिंचाई (Irrigation) : – बीज की बुआई खेत में नमी की पर्याप्त मात्रा रहने पर ही करनी चाहिए । जिससे बीजों का अंकुरण एवं वृद्धि अच्छी प्रकार हो । वर्षाकालीन फसल के लिए सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती । केवल लम्बे समय तक वर्षा न होने पर ही सिंचाई करनी चाहिए । औसतन गर्मी की फसल में 4–6 दिन के अन्तराल पर तथा जाड़े की फसल को 10 से 15 दिन पर पानी देना चाहिए । खरबूज और तरबूज की फसल में फलों की बढ़वार होने के बाद पानी देने की आवश्यकता नहीं पड़ती है ।

पौधों को सहारा देना (Staking) – ग्रीष्मकालीन कद्दू वर्गीय सब्जियों में साधारणतया सहारा देने की आवश्यकता नहीं पड़ती लेकिन वर्षाकालीन फसल में (लौकी, तुरई आदि), फलों को सड़ने से बचाने के लिए बेलों का किसी मचान या अन्य से सहारा देने पर उनकी बढ़वार और उपज पर बहुत अनुकूल प्रभाव पड़ता है ।

प्रमुख कीट एवं व्याधियाँ (Important insect pests and diseases):–

लाल भृंग (Red pumpkin beetal) – यह कीट लाल रंग का होता है तथा अंकुरित एवं नई पत्तियों को खा कर छलनी कर देता है । इसके प्रकोप से कई बार पूरी फसल नष्ट हो जाती है । नियन्त्रण हेतु कार्बोरिल 5 प्रतिशत चूर्ण का 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव करें या कार्बोरिल 50 प्रतिशता घुलनशील चूर्ण का दो कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें या एसीफेट 75 एसपी आधा ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़कें एवं 15 दिन के अन्तर पर दोहराएं ।

फल मक्खी (Fruit fly)– यह करेला, तुरई, टिण्डा, ककड़ी व खरबूजे आदि को अधिक नुकसान पहुँचाती है । इसके प्रकोप से फल काने हो जाते हैं । मादा मुलायम फलों के छिलके के अन्दर अण्डे दे देती है । अण्डों में से डिंभक निकलते हैं जो फल के गूदे को खा कर सड़ा देते हैं । फल विकृत व छोटे रह जाते हैं । नियन्त्रण के लिए प्रभावित फलों को लार्वा सहित नष्ट कर देना चाहिए पौधे के आस–पास की जमीन की खुदाई जनवरी–फरवरी में करने से मक्खी की संतति ऊपर आ जाती है और तेज धूप से नष्ट हो जाती है । मेलाथियान 50 ईसी या डाईमिथोएट 30 ईसी एक मि.ली. का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें । आवश्यकतानुसार 10 से 15 दिन बाद छिड़काव को दोहराएं ।

बरूथी (Mite)– बरूथी पत्तियों की निचली सतह पर रह कर रस चूसती है। इससे पत्तियों पर प्रारम्भ में सफेद धब्बे बनते हैं इसके नियन्त्रण हेतु इथियान 50 ईसी 0.6 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर जून के द्वितीय सप्ताह में छिड़कें ।

चूर्णील आसिता (Powdery mildew) – यह विशेष रूप से जाड़े वाली लौकी, कुम्हड़ा पर लगने वाला सामान्य रोग है । प्रथम लक्षण पत्तियों आर तनों की सतह पर सफेद या धुंधले धूसर धब्बों के रूप में दिखाई देता है । कुछ दिनों बाद ये धब्बे चूर्ण युक्त हो जाते हैं । उग्र आक्रमण के कारण पौधे का असमय निष्पत्रण हो जाता है । इसके कारण फलों का आकार छोटा रह जाता है । नियन्त्रण के लिए खेत को स्वच्छ रखें । रोगग्रस्त फसल के अवशेष एकत्र करके खेत मे ही जला देना चाहिए । बोने के लिए रोग रोधी किस्मों का चयन करें । फफूंदीनाशक दवा जैसे केलिक्सीन 0.05 प्रतिशत अर्थात 1/2 मि.ली. दवा एक लीटर पानी में घोल बना कर सात दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें ।

म्लानी रोग एवं जड़ विगलन रोग (Wilt & root rot)– यह आमतौर पर खीरा, खरबूजा एवं लौकी में पाया जाता है । रोग ग्रसित पौधा मुरझा जाता है । पौधे की जड़ भी सड़ जाती है जिसके कारण पौधा धीरे–धीरे सूख जाता है । नियन्त्रण के लिए रोग ग्रसित पौधे को खेत से निकाल कर जला देना चाहिए। बीज को बाविस्टिन 2.5 ग्राम दवा प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करके बोना चाहिए एवं ट्राइकोडर्मा 3–5 कि.ग्रा./हे. की दर से खेत में डालें ।

रूक्ष रोग (Anthracnose)– पत्तियों पर भूरे अथवा हल्के रंग के धब्बे पाये जाते हैं । पत्तियाँ सिकुड़ कर सूख जाती है। ये धब्बे तने तथा फलों पर भी पाये जाते हैं । यह बीमारी खरीफ में अधिक आती है । बीजों को बाविस्टिन 2.5 ग्राम दवा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए । खेत में रोग के लक्षण शुरू होने पर बाविस्टिन 1 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल 10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिए । फसल अवशेष को जला दें ।

खीरामोजैक वाइरस (Cucumber mosaic virus)– यह रोग कई पत्तियों में चितकबरापन और सिकुड़न के रूप में प्रकट होता है । पत्तियाँ छोटी एवं हरी पीली हो जाती है और उनकी वृद्धि रूक जाती है । पुष्प गुच्छों में बदल जाते हैं । ग्रसित पौधा बौना रह जाता है । नियन्त्रण के लिए रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ कर जला देना चाहिए । खेत के आस–पास से जंगली खीरा एवं इस कुल के अन्य खरपतवारों का उन्मूलन कर देना चाहिए । रोग वाहक कीटों से बचाव करने के लिए मैलाथियान 0.1 प्रतिशत का घोल बना कर दस दिन के अन्तराल में 2–3 छिड़काव करें ।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न–

1. टमाटर की बीज दर कितनी है?
   (अ) 400 से 500 ग्राम/हे.
   (ब) 800 से 900 ग्राम प्रति/हे.
   (स) 1.5 से 2 किलोग्राम/हे.
   (द) 5 किलोग्राम/हे.
2. 'बुलनोज' किसकी किस्म है?
   (अ) लौकी (ब) शिमला मिर्च
   (स) गाजर (द) पत्तागोभी
3. करेला की मुख्य फसल कब लगायी जाती हैं?
   (अ) जनवरी (ब) फरवरी–मार्च
   (स) जून–जुलाई (द) सितम्बर–अक्टूबर
4. मटर की अगेती किस्म हैं :–
   (अ) अर्किल (ब) पूसा ज्योति
   (स) जवाहर मटर (द) सेलक्शन 17
5. हरभजन किस सब्जी की किस्म है?
   (अ) भिण्डी (ब) फूलगोभी
   (स) मूली (द) बैंगन
6. बैंगन की एक हेक्टेयर से उपज मिलती है :–
   (अ) 100 क्वि. (ब) 200–250 क्वि.
   (स) 500 क्वि. (द) 700 क्वि.
7. कौनसी शाक राजस्थान में वर्ष भर उगायी जा सकती है?
   (अ) मूली (ब) फूलगोभी
   (स) लहसुन (द) करेला
8. वर्षाकालीन भिण्डी की बीज दर है :–
   (अ) 8–10 किलोग्राम/हे.
   (ब)15–20 किलोग्राम/हे.
   (स) 40–50 किलोग्राम/हे.
   (द) 70–80 किलोग्राम/हे.
9. 'फ्रूट फ्लाई' को नियंत्रित किया जाता है :–
   (अ) मैलाथियान (ब) रोगोर
   (स) बोर्डो मिश्रण (द) मैन्कोजेब

अतिलघूत्तरात्मक –

10. टमाटर में लगने वाले कीट कौन से है ? किन्हीं दो के नियत्रंण बताइए।
11. टमाटर का पर्णकुंचन रोग क्या है ? लक्षण बताएं तथा इसका उपचार कैसे करेगें ?
12. फूलगोभी की तीन किस्में व उनके बोने का समय बताएं।
13. मटर के अगेती व पछेती किस्मों की बीज मात्रा व उन्नत किस्में लिखिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

14. मूली की तीन किस्में, बोने का समय कटाई का समय व उपज का विवरण दें।
15. प्याज की चार किस्में बोने का समय, कटाई का समय व उपज का विवरण दें।

निबन्धात्मक प्रश्न –

16. टमाटर की बीज दर लगाने की दूरी तथा पौध तैयार करने की विधि लिखिए।
17. लहसुन की खेती का वर्णन निम्न बिन्दुओं पर करें– बीज की मात्रा, खाद व उर्वरक, बुआई की विधि, कीट व व्याधियाँ तथा पैदावार।
18. पालक की खेती का विस्तार से वर्णन कीजिए।
19. भिण्डी की बीज दर, बोने की दूरी व उर्वरक की आवश्यकता का विवरण दें।
20. करेले में खाद व उर्वरक व उसकी बुआई का वर्णन करें।
21. तोरई की फसल की बुआई का पूर्ण विवरण दीजिए।

उत्तरमाला– 1. (अ) 2. (ब) 3. (ब) 4. (अ) 5. (अ) 6. (ब) 7. (अ) 8. (अ)

अध्याय–11
अलंकृत बागवानी
(Ornamental Gardening)

उद्यान विज्ञान की वह शाखा जिसके अन्तर्गत सभी प्रकार के सजावटी और शोभाकारी पौधों, झाड़ियों, लताओं एवं फूल वाले मौसमी पौधों का अध्ययन किया जाता है, अलंकृत बागवानी के नाम से जानी जाती है। इसमें सजावट हेतु भवनों, गमलों में, टोकरियों में, उद्यानों में और शीशों के घरों आदि में सजावटी पौधे उगाने की वैज्ञानिक विधि का अध्ययन किया जाता है।

हमारे देश में वैदिक काल से ही छायादार वृक्षों, औषधीय एवं सुन्दर पुष्पीय पौधों की पूजा अनेक देवी–देवताओं के प्रतीक मानकर होती आ रही है, जैसे कदम्ब श्री कृष्ण से, सीता अशोक कामदेव से, कचनार लक्ष्मी जी से, पीपल शनिदेव से, वट वृक्ष ब्रहमाजी से तथा तुलसी व कमल विष्णु जी से सम्बन्धित माने जाते हैं।

भारत में मुगल शासकों के बाद ब्रिटिश शासकों ने उद्यान कला की लोकप्रियता बढ़ाने के प्रयास किये। इस समय में हरियाली (लॉन), हरबेशियस बॉर्डर (अलंकृत फूल वाले पौधों को लम्बी पट्टी में उगाना), शर्बरी बॉर्डर (झाड़ियों को लम्बी पट्टी में उगाना), आदि का प्रचलन प्रारम्भ हुआ।

अलंकृत बागवानी आदिकाल से मानव जीवन से जुड़ी रही है। मनुष्य के जन्म से मृत्युपर्यन्त तक के सभी कार्यों एवं संस्कारों में फूलों की विशिष्ट भूमिका रहती है। सफेद रंग के पुष्प शान्ति, लाल रंग के पुष्प हृदय के प्रेम एवं नारंगी रंग के पुष्प त्याग व समर्पण प्रदर्शित करने के उपयोग में आते रहे हैं।

अलंकृत बागवानी में फूलों की खेती करके, फूलों से सुगन्धित तेल, इत्र, गुलाब जल, गुलकन्द आदि का निर्माण करके बेचने से अधिक आय प्राप्त की जा सकती है अर्थात् अलंकृत बागवानी को रोजगार के रूप में अपनाया जा सकता है।

अलंकृत बागवानी का महत्व (Importance of ornamental gardening):– वनस्पति के बिना हम मानव जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। हमारे जीवन की प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति वनस्पति से ही होती है। अलंकृत वृक्षों, झाड़ियों, लताओं एवं पुष्पीय पौधों को विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उगाया जा रहा है। अलंकृत बागवानी के महत्व को निम्न प्रकार जाना जा सकता है –

(1) सजावट के लिए (Decorative use)– आधुनिक युग में अनेक कारणों से गाँवों एंव शहरों का प्राकृतिक सौन्दर्य बिगड़ रहा है। अलंकृत पौधों द्वारा सार्वजनिक स्थलों–कार्यालय, अस्पताल, डाकघर, रेल्वे स्टेशन, विद्यालय, महाविद्यालय, सामुदायिक केन्द्र पंचायत घर, खेल मैदान आदि को सुन्दर व आकर्षक बनाया जा सकता है। निजी भवनों, बंगलों को सजावटी पौधे जैसे – गुलाब, गेंदा, चमेली, गुलदावदी, मनीप्लान्ट, क्रोटन, केली आदि का गमलों, क्यारियों अथवा खाली भूमि पर लगाकर सजाया जा सकता है। पर्याप्त स्थान होने पर हरियाली तथा फूल वाले वृक्ष व झाड़ियाँ भी लगायी जा सकती है। गाँवों के समीप तालाबों के किनारे, तथा सड़क के किनारों पर शोभाकारी वृक्ष जैसे– कचनार, अमलताश, गुलमोहर आदि लगाये जा सकते हैं। बड़े–बड़े हाइवे के डिवाइडर पर कनेर, बोगनविलिया, गुड़हल आदि लगाकर सजावट की जाती है।

(2) मनोरंजन का साधन (For Recreation):– आजकल मनुष्य मशीन की तरह दिन भर कार्य में व्यस्त रहता है, और जब घर लौटता है तो वह शारीरिक एवं मानसिक रूप से थका हुआ होता हैं। ऐसे समय उसे मनोरंजन की आवश्यकता होती है। इसके लिए घर पर बनी गृह पुष्प वाटिका सर्वाधिक उपयुक्त मानी गयी है। वहाँ के रंग बिरंगे फूलों की मन मोहक छटा उसकी दिन भर की थकान को दूर कर देती है। पार्कों में इस प्रकार मनोरंजन के लिए आने वाले व्यक्तियों की संख्या बढ़ रही है।

(3) आर्थिक महत्व (Economic importance):– आधुनिक युग भौतिक युग कहा जाता है, और अलंकृत पुष्प अब आय का

अच्छा साधन बन रहे हैं। फूलों की धार्मिक अवसरों, पूजन, स्वागत कार्यों, जन्मदिन, शादी जैसे उत्सवों पर मालाएँ, बुके, गजरे, बटन होल, कट फ्लावर, मण्डप सजाने आदि कार्यो के लिए अधिक माँग रहती है। इसके लिए विशेष रूप से गुलाब, चाँदनी, डहेलिया, गुलदावदी, गेंदा, एस्टर, फ्लाक्स, साल्विया आदि फूलों का उपयोग होता है। विभिन्न फूलों से सुगन्धित तेल व इत्र का निर्माण किया जाता हैं। भारत में गुलाब, चन्दन, चम्पा, चमेली, केवड़ा, यूकेलिप्टस, रजनीगंधा जैसे लगभग 1100 पौधे है जिनसे तेल निकालकर सुगन्ध और दवाओं में प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा गुलाब जल, केवड़ा जल, गुलकन्द आदि बनाकर आय प्राप्त की जाती है। इन सभी से देश में लगभग दो लाख लोगों को रोजगार मिलता है और लगभग 20 करोड़ रूपये की आय प्रति वर्ष होती है।

(4) पर्यावरण की शुद्धता (Purification of environment):– विभिन्न कारणों जैसे बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिकीकरण, मोटर वाहन आदि से वायुमण्डल में प्रदूषण बढ़ रहा है, जिसके कुप्रभाव मनुष्यों के स्वास्थ्य पर दिखायी पड़ रहे हैं। ऐसे समय में अलंकृत बागवानी में लगाये गये वृक्षों व पौधों से वातावरण को प्रदूषण रहित बनाया जा सकता है। पौधे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा कार्बन डाई आक्साइड को ऑक्सीजन में बदलकर, वाष्पोत्सर्जन की क्रिया द्वारा वायुमण्डल के तापमान को नियन्त्रित करके, ध्वनि तरंगों को पत्तियों द्वारा कम (अवशोषित) करके एवं वर्षा को नियमित करके पर्यावरण की शुद्धता बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(5) धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्व (Religious and Spiritual importance):– हमारे देश में अलंकृत पौधों का धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्व भी है, जैसे– कचनार के सफेद पुष्प का सम्बन्ध धन की देवी लक्ष्मी से, कदम्ब के वृक्ष का सम्बन्ध श्री कृष्ण से है और अमलताश के पुष्प व्यापार में समृद्धि बढ़ाने वाले माने जाते हैं। ताजा पुष्पों का उपयोग मंदिर, मजार, गुरूद्वारा एवं चर्च आदि पवित्र स्थानों पर किया जाता है। देवी देवताओं को पुष्प अर्पण करना एक प्राचीन परम्परा है, जो आज तक चली आ रही है। दक्षिण भारत में उगाये जाने वाले अधिकांश पुष्पों का प्रयोग पूजा अर्चना के लिए ही किया जाता है।

(6) औषधीय महत्व (Medicinal importance):– भारत में प्राचीन काल से आयुर्वेदिक पद्धति से रोगों का उपचार किया जाता है और जड़ी–बूटी औषधीय रूप में प्रयोग की जाती है। इसके कारण भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा 1972 में औषधीय एवं सुगन्धित पौधों पर अखिल भारतीय सुधार परियोजना चालू की गई जिसमें 8 मुख्य औषधीय फसलों – अफीम, ईसबगोल, सर्पगन्धा, सनाय, पायरेथ्रम, मुलहठी, फॉक्स ग्लोब व सदाबहार पर देश के विभिन्न भागों में अनुसंधान कार्य चल रहा है। नीम, तुलसी, गुग्गुल, सनाय आदि अनेक पौधों के भागों से आयुर्वेदिक, यूनानी, होम्योपेथिक तथा ऐलोपेथिक औषधियों का निर्माण किया जाता है।

(7) मृदा संरक्षण (Soil conservation):– पेड़–पौधों से आच्छादित भूमि पर जल एवं वायु द्वारा मृदा क्षरण कम होता है। खाली व रेगिस्तानी भूमि पर अलंकृत पौधे लगाकर भूमि के कटाव को रोका जा सकता है, हरसिंगार का पौधा इसके लिए विशेष उपयुक्त रहता है। पेड़–पौधों की जड़ें मिट्टी को बाँध कर रखती है और पत्तियाँ वर्षा की बूँदों का वेग कम करती है साथ ही भूमि पर गिरकर पलवार का काम भी करती है जिससे मृदा एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं जा पाती है।

अलंकृत बागवानी का भविष्य (Scope of ornamental gardening) :– भारत में विभिन्न प्रकार की जलवायु एवं भूमि पायी जाती है इस कारण वर्ष भर फूलों की खेती की जा सकती है। राजस्थान के जयपुर, अजमेर, उदयपुर, कोटा व अन्य शहरों के आस–पास फूलों की खेती की जा रही है, जिसमें गेंदा, गुलाब, गुलदावदी, रजनीगंधा, ग्लेडियोलस एवं मोगरा की खेती प्रमुख है। भारत व राजस्थान में अलंकृत बागवानी का उज्ज्वल भविष्य निम्नप्रकार दिखायी पड़ता है :–

(1) आजकल फूलमाला, बुके, कटफ्लावर आदि की माँग में तेजी से वृद्धि हो रही है।

(2) फूलों का उत्पादन वर्ष भर होते रहने से लगातार आय का साधन बन सकता है।

(3) अच्छी गुणवत्ता के फूलों के बीजों की माँग बढ़ रही है।

(4) खुशबू वाले फूल जैसे– मोगरा, चमेली, रजनीगंधा व गुलाब आदि।

(5) फूलों के अर्क का प्रयोग सौन्दर्य प्रसाधन, साबुन व क्रीम आदि बनाने में हो रहा है।

(6) घरों, होटलों व प्रतिष्ठानों आदि में बोनसाई (बौनेपोधे) की माँग बढ़ रही है।

(7) नये–नये कारखानों व नगरों का विकास हो रहा है जिनमें अलंकृत पौधों की माँग होना स्वाभाविक है।

(8) फूलों के निर्यात की प्रबल संभावनाएँ हैं, जिससे अधिक आय एवं विदेशी मुद्रा प्राप्त हो सकती है।

उद्यान के प्रकार (Types of garden)

नये स्थान पर उद्यान स्थापित करने के लिए रेखांकनकर्ता एक कलाकार, सौन्दर्य पारखी, माली, शिल्पकार व वनस्पति विज्ञान का ज्ञाता होना चाहिए सुन्दरता एवं उपयोगिता का सम्मिश्रण एक अच्छे बगीचे में मिलना चाहिए। उपयोगिता के आधार पर उद्यानों के तीन प्रकार माने जाते हैं –

1. निजी उद्यान (Private garden)
2. सार्वजनिक उद्यान (Public garden)
3. शाला उद्यान (School garden)

1. निजी उद्यान :– (Private Garden) :– इस प्रकार के उद्यानों का निर्माण कोठियों, बंगलों आदि की सीमा के अन्दर वाले स्थानों में किया जाता है, जो क्षेत्रफल में सीमित होते हैं। इस प्रकार के उद्यान समतल भूमि पर बनाये जाते हैं। उद्यान में सभी अवयव संतुलित होते हैं। बगीचे की योजना में रेखाओं व कोणों को महत्व दिया जाता है। रास्ते और पगडण्डियों के दोनों ओर लगे पौधों और झाड़ियों में समरूपता रखी जाती है।

निजी उद्यानों में विशिष्ट वृक्षों, झाडियों व लताओं की संख्या सीमित रखी जाती है। मौसमी फूलों को अधिक महत्व दिया जाता है। छाया वाले स्थानों पर क्रोटन, फर्न, मोनेस्टेरा, कोलियस, पाम आदि रखकर सुन्दरता बढ़ाई जा सकती है। मकान के अन्दर खिड़कियों, बरामदे आदि में गमले व टोकरियाँ रखे जा सकते है। घर के सामने लॉन व उसके चारों तरफ फूलों की क्यारियाँ बनायी जाती है। कुछ वृक्ष व झाड़ियाँ जो रात्रि के समय अपनी सुगन्ध फैलाते हैं जैसे रात की रानी, गंधराज (*गार्डेनिया फ्लोरिडा*) को शयन कक्षों के दरवाजों और खिड़कियों के पास लगाया जा सकता है।

निजी उद्यान योजना (Planning of Private garden) :– निजी उद्यान घर का एक विशिष्ट भाग होता है जिसमें परिवारीजन अधिक समय तक रहते हैं और उसका समुचित उपयोग करते हैं। कुछ उद्यानविदों ने इसे बाहरी निवास (Out door living house) की संज्ञा दी है। जिस प्रकार भवन के अन्दर शयन कक्ष, बैठक कक्ष, स्नानघर, रसोईघर, शौचालय आदि का निर्माण किया जाता है, उसी प्रकार बाहरी निवास या निजी उद्यान का विभाजन निम्नलिखित तीन भागों में किया जाता है –

(i) जनहित भाग (Public area)
(ii) सेवाभाग (Service area)
(iii) व्यक्तिगत भाग (Private area)

(i) जनहित भाग (Public area) – इसका उपयोग विशेषकर इष्ट मित्रों, पारिवारिक सम्बन्धियों आदि के स्वागत हेतु किया जाता है। यह भाग भवन के ठीक सामने होता है। इसमें लॉन, फुहारा, अलंकृत वृक्ष व झाड़ियाँ लगायी जाती है।

(ii) सेवा भाग (Service area) – सामान्यतः यह भाग मकान के एक तरफ बनाया जाता है जिसमें पीछे का रास्ता व गैरेज आदि होते हैं। यहाँ दो छायादार वृक्ष लगाना उचित रहता है। कुछ खुला स्थान कपड़े आदि सुखाने के लिए रखा जाता है। सुन्दर झाड़ियाँ जैसे– बोगनविलिया, चाँदनी, रात की रानी आदि का उपयोग इस भाग को जनहित भाग से अलग करने के लिए किया जात है। पर्याप्त स्थान उपलब्ध होने पर इस भाग में बैडमिण्टन कोर्ट, किचन गार्डन आदि बनाये जा सकते हैं।

(iii) व्यक्तिगत भाग (Private area) – जिस प्रकार मकान में शयन कक्ष का उपयोग होता है, उसी प्रकार निजी उद्यान में व्यक्तिगत भाग का उपयोग होता है। परिवार के लिए उपयोगी इस भाग में टेनिस, बैडमिण्टन, मन्दिर, खेल मैदान, विभिन्न मौसमी फूलों की क्यारियाँ, तरणताल, एकान्त निवास कुंज, पहाड़ीनुमा बाग (Rockery), शेड हाउस आदि बनाये जा सकते हैं।

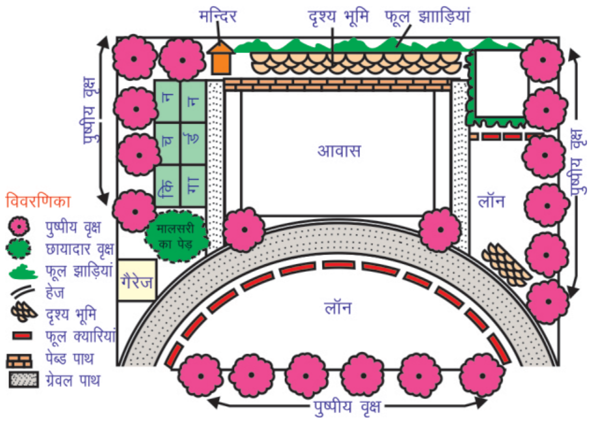

एक निजी उद्यान का रेखाचित्र
Layout Plan of Private Garden

2. सार्वजनिक उद्यान (Public Garden) – इस प्रकार के उद्यान शहरों में सार्वजनिक स्थानों जैसे– चिड़ियाघर, संग्रहालय, खेल मैदान अस्पताल परिसर आदि में बनाये जाते है। ये आकार में बड़े होते है। इन्हें नगर निगम, नगरपालिका या विकास

प्राधिकरणों के द्वारा बनाया जाता है। इनका उपयोग आम नागरिकों द्वारा किया जाता है। इसलिए इन्हें सार्वजनिक उद्यान कहते हैं। सार्वजनिक उद्यानों का निर्माण निम्नलिखित तीन शैलियों में किया जाता है –

(i) औपचारिक शैली उद्यान (Formal Style of Gardening)

(ii) अनौपचारिक शैली उद्यान (Informal Style of Gardening)

(iii) स्वतन्त्र शैली उद्यान (Free Style of Gardening)

(1) औपचारिक शैली उद्यान (Formal Style of Gardening) – इस विधि को ज्यामितीय (Geometrical) या सममित (Symmetrical) शैली भी कहते है। इन उद्यानों में प्रमुख रूप से दो तरफा संतुलन अपनाया जाता है। उद्यानों में लगभग बीचों बीच किसी प्रकार का भवन होता है जो मुख्य द्वार से एक पक्की सड़क द्वारा जुड़ा रहता है। यह सड़क सम्पूर्ण उद्यान को दो समान भागों में बाँटती है तथा सड़क के दोनों तरफ के भागों का निर्माण लगभग एक जैसा होता है। दोनों ओर एक सी सड़के, वृक्ष, झाडियाँ, क्यारियाँ, फुहारे, पानी की नाली आदि होते हैं। मुख्य सड़क पर खड़े होकर दोनों तरफ देखने पर दोनों भाग एक दूसरे के प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ते है। औपचारिक उद्यान में चारदीवारी, रास्ते, फुहारे, फूलों की क्यारियाँ, हरियाली (Lawn), मूर्तियाँ, सीटे, मण्डप, तोरण द्वार आदि होते हैं। इन उद्यानों की बनावट में भूमि की उपलब्धता विशेष महत्व रखती है। ताज गार्डन आगरा, शालीमार बाग कश्मीर, मुगल गार्डन दिल्ली इन उद्यानों के प्रमुख उदाहरण है।

औपचारिक उद्यान शैली

(ii) अनौपचारिक शैली उद्यान (Informal Style of Gardening) – अनौपचारिक उद्यानों में पौधों को प्राकृतिक रूप से उगाया जाता है और इनमें उद्यान का खाका अनौपचारिक होता है अर्थात् कोई दृढ़ नियम नहीं होता है। इन उद्यानों को प्राकृतिक रूप प्रदान करने के लिए पहाड़ियाँ, नदी, झरने, पुल, नाले, तालाब, टेड़े–मेड़े रास्ते या ऊँचे–नीचे स्थान बनाये जाते हैं। झील और तालाबों में जलीय जैसे कमल उगाकर सौन्दर्य बढ़ाया जाता है। अनौपचारिक उद्यानों में भूमि का तल एक सार नहीं होता, कहीं पर विशाल गड्ढे होते हैं तो कहीं रेत के ऊँचे–ऊँचे टीले व छोटी मोटी पहाड़ियाँ इन जगहों पर घास, वृक्ष फूल वाली झाड़ियाँ लगायी जाती है। ऐसे उद्यानों में जाने पर आगे आने वाले दृश्य का अनुमान लगाना कठिन होता है। इनमें आड़े–तिरछे रास्ते होते हैं और बैठने के लिए सीट्स नहीं लगायी जाती है। जापानी उद्यान इनके प्रमुख उदाहरण हैं।

अनौपचारिक उद्यान शैली

(iii) स्वतन्त्र शैली उद्यान (Free Style of Gardening)– इन उद्यानों को अपूर्व चित्र शैली या कलात्मक शैली उद्यान के नाम से भी जाना जाता है। इस प्रकार के उद्यानों में औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों शैलियों का मिश्रण पाया जाता है। औपचारिक उद्यान के अच्छे स्थलों व अनौपचारिक उद्यान के प्राकृतिक व आध्यात्मिक सौन्दर्य का मिश्रण करके इन्हें बनाया जाता है। इस प्रकार की शैली के उद्यानों का प्रचलन शहरों में धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है।

3. शाला उद्यान (School Garden) – शिक्षण संस्थाओं के चारों तरफ सुन्दर एवं स्वच्छ वातावरण का विशेष महत्व होता है। प्राचीन समय में गुरुकुल प्राकृतिक क्षेत्रों में शहरों से दूर स्थित होते

थे। इससे विद्यार्थियों में निरीक्षण की तीव्र शक्ति, धैर्य, एकाग्रता, विचारों का क्रम में व्यक्त करना रंग और रूप की समझ आदि मानसिक गुणों का विकास होता था। आज के समय में भी विद्यालय के लिए इसका विशेष महत्व है। वनस्पति शास्त्र एवं उद्यान विज्ञान जैसे विषयों की शिक्षा इन उद्यानों के बिना अपूर्ण व नीरस रहती है।

शाला उद्यानों में विद्यार्थियों के खेलने कूदने के लिए खुला स्थान रखा जाता है। चौड़े खुले स्थान के चारों तरफ मौसमी फूलों की क्यारियों, कुछ दूरी पर शर्बरी बार्डर, रोजरी, अलंकृत वृक्षों व झाडियों के समूह तथा फल वृक्षों की विभिन्न जातियाँ मिलकर एक उत्तम शाला उद्यान बनाते हैं। सार्वजनिक उद्यानों की किसी एक शैली को उपयुक्तता के अनुसार अपनाया जा सकता है। साधारणतया ये उद्यान औपचारिक शैली में बनाये जाते हैं।

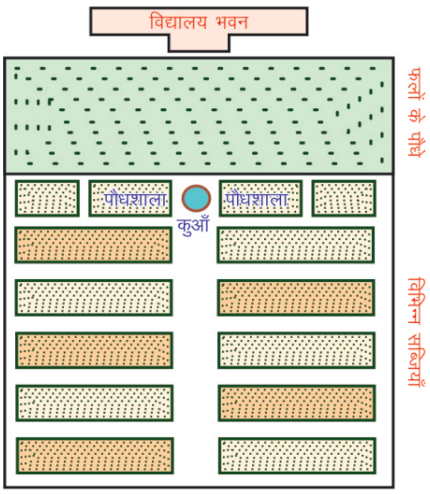

शाला उद्यान

अलंकृत पौधों का अध्ययन (Study of ornamental Plants)

अलंकृत वृक्ष (Ornamental Plant)

सम्राट अशोक के शासन काल से आज तक राजमार्गों, सड़कों आदि के किनारों पर वृक्षारोपण की परम्परा चली आ रही है। आजकल प्रत्येक गाँव, शहर, ऐतिहासिक इमारतों एवं मार्गों पर वृक्ष लगाये जा रहे हैं। इसके पीछे हमारा उद्देश्य इन स्थानों को सौन्दर्यपूर्ण बनाना है। साथ ही मनुष्य एवं प्रकृति को साथ लाना और ताजा एवं शुद्ध हवा प्रदान कराना है।

वर्तमान समय में एक तरफ जनसंख्या तीव्रगति से बढ़ रही है तो दूसरी ओर औद्योगिक विकास भी तीव्र गति से हो रहा है। बड़े–बड़े नगरों में दूषित वातावरण से छुटकारा दिलाने हेतु अब योजनाकारों ने इन क्षेत्रों में हरित पट्टियाँ, मनमोहक वाटिकाएँ और सड़कों के दोनों ओर वृक्षारोपण पर विशेष ध्यान देना प्रारम्भ कर दिया है। वृक्षों द्वारा कार्बन–डाइ–ऑक्साइड ग्रहण करके आक्सीजन प्रदान की जाती है जिससे O_2 व CO_2 का संतुलन बना रहता है। वृक्षों से छाया, लकड़ी की प्राप्ति के अलावा अनेक लाभ होते हैं। हमारे देश व राज्यों में विभिन्न प्रकार की मिट्टी एवं जलवायु पायी जाती है। अतः पौधों का चयन स्थान विशेष के अनुसार करना चाहिए। सजावटी/पुष्पदायी वृक्षों को प्रमुख रूप से निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है –

1. वृक्ष के आकार के अनुसार (Classification according to size of tree)–

(i) बड़े आकार के वृक्ष (Big Trees)

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
नीम	*Azadirachta indica*
सेमल	*Bombax malabaricum*
अशोक	*Polyalthea longifolia*
पिलखन	*Ficus infectoria*
बरगद	*Ficus benghalensis*

(ii) मध्यम आकार के वृक्ष (Medium trees)

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
गुलमोहर	*Delonix regia*
गुलाबी कचनार	*Bauhinia purpuria*
जावा केशिया	*Cassia javanica*
पगूडा	*Erythrina indica*

(iii) छोटे आकार के वृक्ष (Small trees)

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
कचनार सफेद	*Bauhinia variegata*
गुलाबी केशिया	*Cassia renigera*
चैतियन	*Alstonia scholaris*
चम्पा	*Plumeria alba*
आस्ट्रेलियन बबूल	*Acacia auriculifarmis*

2. सुन्दरता के अनुसार

(i) फूलों के लिए –

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
नीला गुल मोहर	*Jacaranda mimosaefolia*
गुलाबी कचनार	*Bauhinia purpurea*

आकाश नीम	*Millingtonia hortensis*
जावा केशिया	*Cassia javanica*
महुआ	*Madhuca latifolia*
कदम्ब	*Anthocephalus cadamba*
सफेद चम्पा	*Plumeria rubra*
जरूल	*Lagerstroemia speciosa*

(ii) पत्तियों की सुन्दरता के लिए–

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
पुत्रनजीवा	*Putranjiva roxburghii*
बोतल ब्रुश	*Callistemon lanceolatus*
सफेदा	*Eucalyptus citrodora*
अशोक	*Saraca indica*
पारस पीपल	*Thespesia populnea*

3. वृक्ष लगाने के उद्देश्य के अनुसार (Classification according to objects)

(अ) सड़कों के किनारे के लिए –

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
सफेदा प्रजाति	*Eucalyptus sp*
पॉपुलर सफेद	*Populus alba*
कमरख	*Averrhoa carambola*
देवदार	*Cedrus deodara*
स्पेठोदिया	*Spathodia nilotica*

(ब) समूह में लगाने के लिए –

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
अमलतास	*Cassia fistula*
अर्जुन	*Terminalia arjuna*
बरौना	*Crataeva nurvala*
बकैन नीम	*Melia azadirach*
गलगल गुनेरी	*Cochlospermum velegiosum*

(स) नमूने के रूप में लगाने के लिए –

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
बेल	*Aegle marmelos*
गोरख इमली	*Adansonia digitata*
सेमल	*Bombax malabaricum*
बिगोनिया	*Bigonia crispa*
चाल्टा	*Dilenia indica*

(द) नदी के किनारे के लिए –

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम

एवेन्यू (Avenue)

" जब वृक्ष सीधी लाइन में सड़क के दोनों किनारों की ओर लगाये जाते हैं तो उन्हें मार्ग एवेन्यू (Roadside avenues) कहते हैं "

एवेन्यू को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है –

1. बगीचे के अन्दर एवेन्यू (Inside garden avenue)
2. राजमार्ग एवेन्यू (Highway avenue)

1. बगीचे के अन्दर एवेन्यू – इसमें अलंकृत वृक्ष बगीचे में सड़क के दोनों ओर बगीचे के अनुसार लगाये जाते हैं। अलग–अलग सड़क पर अलग–अलग प्रकार के पौधे लगाते हैं जो वर्ष में अलग–अलग समय पर फूल देकर सुन्दरता बढ़ाते हैं।

2. राजमार्ग एवेन्यू – इसमें बड़े छायादार, फूल व फल देने वाले वृक्षों को सड़क के दोनों तरफ दो या तीन लाइनों में लगाया जाता है। जिससे सड़क पर छाया मिलती है और सड़क की सुन्दरता बढ़ती है।

राजमार्ग एवेन्यू

महानगरों में स्थान विशेष की जलवायु को ध्यान में रखकर फूल आने के समय व रंग के अनुसार वृक्ष लगाये जाते है इसे रंग योजना (Colour Scheme) कहते हैं। कुछ रंग योजनाएँ निम्न प्रकार है।

योजना - I

क्र.सं.	वृक्ष का नाम	वानस्पतिक नाम	फूल का रंग
1	अमलतास	*Cassia fistula*	पीला

2.	गुलमोहर	*Delonix regia*	स्कॉरलेट नारंगी
3.	अमलतास	*Cassia fistula*	पीला

योजना - II

क्र.सं.	वृक्ष का नाम	वानस्पतिक नाम	फूल का रंग
1	नीला गुलमोहर	*Jacaranda mimosaefolia*	नीला
2.	सिल्वर ओक	*Gravillea robusta*	पीला
3.	नीला गुलमोहर	*Jacaranda mimosaefolia*	नीला

योजना - III

क्र.सं.	वृक्ष का नाम	वानस्पतिक नाम	फूल का रंग
1	गुलाबी कचनार	*Bauhinia purpurea*	हल्का गुलाबी
2.	सफेद कचनार	*B. alba*	सफेद
3.	पीला कचनार	*B. Krugii*	हल्का पीला
4.	कचनार	*B. variegata*	बैंगनी नीला

एवेन्यू के लिए पौधे लगाना एवं देखभाल (Care and Planting of Avenue Trees)-

गड्ढे खोदना व पौधे रोपना – वृक्ष लगाने के लिए 1मी. x 3मी. x 1मी. आकार के गड्ढे खोदे जाते हैं। गड्ढों का आपसी अन्तर वृक्षों की ऊँचाई व आकर के अनुसार रखा जाता है। कम ऊँचाई वाले पौधों के लिए 1 से 3 मीटर, मध्यम ऊँचाई वाले पौधों के लिए 6–8 मीटर तथा अधिक ऊँचाई वाले पौधों के लिए 10–12 मीटर की दूरी पर गड्ढे खोदने चाहिए। इन गड्ढों को कम से कम एक सप्ताह तक खुला रख कर निकाली गई मिट्टी में एक भाग गोबर की सड़ी खाद, 1 भाग पत्ती की खाद, 1 भाग चिकनी मिट्टी व 50–75 ग्राम/गड्ढा मिथाइल पेराथियान चूर्ण मिलाकर भर देते हैं।

सदाबहार पौधों को रोपने का उपयुक्त समय जुलाई–अगस्त तथा पतझड़ वाले पौधों को रोपने का सही समय फरवरी–मार्च होता है। पौधे के पिण्ड के अनुसार तैयार गड्ढों के बीच में पौधा लगाकर तुरन्त हल्की सिचाई कर देनी चाहिए।

देखभाल – रास्तों पर मनुष्यों एवं पशुओं का आवागमन बना रहता है। अतः नये लगाये पौधों के बचाव हेतु ड्रमों या ईंटों की जाली अथवा लोहे की सरिया से निर्मित ट्री गार्ड्स लगाने चाहिए इसके अलावा समय–समय पर निराई गुड़ाई, खाद–उर्वरक, सिंचाई, काट छाँट, संधाई आदि का ध्यान रखना चाहिए।

झाड़ियाँ (Shrubs)

ऐसे बहुवर्षीय पौधे जिनमे भूमि की सतह के समीप से अनेक स्थायी काष्ठीय तने निकलते हैं। झाड़ी कहलातें हैं। झाड़ियाँ 2 से 4 मीटर ऊँची, काष्ठीय, अर्द्ध–काष्ठीय या शाकीय व स्थायी प्रकृति की होती हैं।

झाड़ियों के सामान्य उपयोग

झाड़ियों के सामान्यतया निम्नलिखित उपयोग होते है–

1. झाड़ियाँ उद्यान का प्रमुख अंग होती है। जब इन्हें ऊँचे वृक्षों की श्रृंखला में लगाया जाता है तो ये स्थान विशेष की सुन्दरता को बढ़ा देती है।
2. काट छाँट करके झाड़ियों से विभिन्न प्रकार की आकृतियों का निर्माण किया जाता है जिससे उद्यान अधिक सुन्दर दिखाई देता है।
3. बाड़ (Hedge) लगाकर सीमांकन एवं सुरक्षा के लिए झाड़ियों का उपयोग किया जाता है।
4. बड़े उद्यानों को सीमित करने, नौकरों के मकानों, गृह वाटिका, व खेल मैदानों को आड़ देने के लिए झाड़ियाँ उपयोगी होती है।
5. गर्मियों में गर्म एवं सर्दियों में सर्द हवाओं से बचाव के लिए इनका उपयोग किया जा सकता है।
6. अभद्र दृश्यों को छिपाने के लिए झाड़ियाँ उपयोगी होती है।
7. कुछ झाड़ियों जैसे चमेली आदि के सुन्दर पुष्पों से आय प्राप्त होती है।
8. सुनियोजित तरीके से झुरमुट (Shrubberies) तैयार करके मनोरम दृश्य बनाया जा सकता है।

ऊँचाई के आधार पर झाड़ियाँ निम्न प्रकार की होती हैं –

झाड़ियाँ लगाने के सामान्य सिद्धान्त :–

1. झाड़ियों को बड़े छायादार वृक्षों और भवनों की छाया में नहीं लगाना चाहिए।
2. अच्छे प्रभाव के लिए झाड़ियों को पूर्व एवं दक्षिण दिशा में लगाना चाहिए।
3. झाड़ियों को सम्भवतया बड़े वृक्षों के समक्ष उगाना चाहिए जिससे ये देखने में सुन्दर दिखाई देती है।

अधिक ऊँचाई वाली झाड़ियाँ

क्र.सं.	झाड़ी का नाम	ऊँचाई (मी.)	फूल/पत्तियों का रंग	फूल आने का समय	प्रवर्धन की विधि
1	*हिबिस्कस रोजा साइनेन्सिस*	2–2.5	क्रीम लाल	नव.–दिसम्बर	बीज व कलम
2	*डुरैन्टा प्लयूमेराई*	2–2.5	नीला	अक्टू.–दिसम्बर	बीज व कलम
3	*मोराया ऐक्जोटिका*	2.5–3.0	सफेद	फर.–दिसम्बर	बीज,दाब
4	*थेवटिया नैरिफोलिया*	2.5–3.0	पीला	वर्ष भर	बीज, कलम
5	*हमेलिया पेटन्स*	2.5–3.0	नारंगी लाल	वर्ष भर	कलम
6	*पोइनशिया पुल्चरीमा*	3–3.5	पीला व लाल	दिस.–मार्च	कलम,दाब
7	*लेजिस्ट्रोमीया इंडिका*	2–3.0	गुलाबी	मई–अगस्त	बीज, कलम
8	*लेन्टाना केमरा*	2–3.0	लाल,पीला,नांरगी	वर्ष भर	कलम, बीज
9	*टिकोमा स्टेन्स*	3–3.5	पीला	वर्ष भर	बीज, कलम
10	*बुडेलिया मेडागास्करेन्सिस*	2–3.0	लाल, बैंगनीपन लिए	बसन्त ऋतु	कलम, दाब

मध्यम ऊँचाई वाली झाड़ियाँ

क्र.सं.	झाड़ी का नाम	ऊँचाई (मी.)	फूल/पत्तियों का रंग	फूल आने का समय	प्रवर्धन की विधि
1	*एकेलिफा स्पी.*	1.5–2.0	किरमिजी, रंगबिरंगी पत्तियाँ	वर्ष भर	कलम
2	*बुडेलिया एशियाटिका*	1.5–2.0	सफेद फूल, चाँदी जैसी सफेद पत्तियाँ	शरद ऋतु	कलम, दाब
3	*जैसमिनम सेमबेक*	1.5–2.0	सफेद	जुलाई–अगस्त	दाब
4	*सेस्ट्रम ओरेन्टिकम*	1.5–2.5	पीले गुलाबी	वर्ष भर	दाब
5	*सेस्ट्रम नॉकटर्नम*	1.5–2.25	पीले, सफेद	फरवरी–सितम्बर	दाब
6	*क्रोटोन स्पी.*	2.0–2.5	सुनहरी, चित्तीदार पत्तियाँ	वर्ष भर	कलम
7	*केलन्ड्रा हाईब्रिडा*	2.0–2.5	लाल	फरवरी–सितम्बर	कलम
8	*अकेशिया बाइफ्लोरा*	1.5–2.5	पीला	वर्ष भर	बीज, कलम
9	*टिकोमा केपेन्सिस*	1.2–1.5	गुलाबी, लाल	वर्ष भर	दाब, कलम
10	*बुडेलिया डायवर्सिफोलिया*	1.–1.5	लाल,बैंगनीपन लिए हुए	बसन्त ऋतु	कलम, दाब

छोटी झाड़ियाँ

क्र.सं.	झाड़ी का नाम	ऊँचाई (मी.)	फूल/पत्तियों का रंग	फूल आने का समय	प्रवर्धन की विधि
1	*एकेलिफा मेकाफिकाना*	1.0–1.25	लाल, ताँबे के रंग की पत्तियाँ	वर्ष भर	कलम
2	*बारलेरिया क्रिस्टाटा*	0.6–1.2	नीले, बैगनी	शरद ऋतु की समाप्ति और वर्षा ऋतु में	कलम
3	*डीडाला केन्थस स्पी.*	1.0–1.2	नीले फूल	शरद ऋतु की समाप्ति	बीज व कलम
4	*इरेन्थिमम स्पी.*	.5–1.0	बैगनी फूल व पीले रंग की पत्तियाँ	वर्ष भर	कलम
5	*पेडलेन्थस स्पी.*	.5–1.0	सफेद पीलापन लिए फूल व हरी पत्तियाँ	वर्ष भर	बीज व कलम
6	*लेन्टाना सेलोविना*	1.0–1.5	क्रीमी सफेद	वर्ष भर	बीज व कलम
7	*रुजेलिया जुन्सिया*	.5–1.0	लाल	वर्ष भर	विभाजन द्वारा
8	*क्रोटोलेरिया*	1.0–1.25	पीला	अगस्त–सित.	कलम

लता वाली झाड़ियाँ

क्र.सं.	झाड़ी का नाम	ऊँचाई (मी.)	फूल/पत्तियों का रंग	फूल आने का समय	प्रवर्धन की विधि
1	*बोगनविलिया स्पी.*	1.25–3.0	लाल, पीली, गुलाबी, विभिन्न रंग	नवम्बर–अप्रैल	कलम
2	*टिकोमा कैम्पनसिस*	1.25–2.0	नारंगी, लाल	वर्ष भर	बीज व कलम
3	*जैसमिनम ग्रान्डीफ्लोरम*	1.0–1.5	ऊपर सफेद, नीचे लाल	अप्रैल–सित.	कलम

4. मकान के पास कम ऊँचाई वाली तथा दूर अधिक ऊँचाई वाली झाड़ियाँ लगानी चाहिए।

5. बड़े उद्यानों में सीमा विभाजन के लिए झाड़ियों को लगाना चाहिए।

6. झुरमुट में झाड़ियों की ऊँचाई के अनुसार चौड़ी क्यारियाँ बनानी चाहिए।

झाड़ियाँ लगाने की प्रमुख कृषि क्रियाएँ – झाड़ियाँ बनाने के लिए निम्नलिखित क्रियाएँ की जाती है –

1. भूमि का चयन :– झाड़ियाँ लगाने के लिए उचित जल निकास वाली, जीवांश युक्त, उर्वरता वाली भूमि उपयुक्त रहती है। भूमि में कठोर परत नहीं होनी चाहिए। झाड़ियाँ लगाने के स्थान पर पर्याप्त सूर्य का प्रकाश उपलब्ध रहना चाहिए।

2. स्थान की तैयार :– स्थान के चयन करने के पश्चात् झाड़ियाँ लगाने से 15–20 दिन पूर्व जिस स्थान पर पौधे लगाने हो वहाँ अधिक ऊँचाई वाली झाड़ियों के लिए 3–5 मी., मध्यम ऊँचाई वाली झाड़ियों के लिए 2 से 2.5 मी. तथा छोटी झाड़ियों के लिए 1–1.5 मी. की दूरी पर 45–60 सेमी आकार के गड्ढे खोदकर इनकी मिट्टी को कुछ दिन खुला छोड़ देते हैं। बाद में प्रत्येक गड्ढे में पर्याप्त मात्रा में गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद मिट्टी में मिलाकर भर देते हैं।

3. झाड़ियाँ लगाने का समय – झाड़ियाँ लगाने का सर्वोत्तम समय जुलाई से सितम्बर तक होता है। जहाँ पर पर्याप्त मात्रा में पानी की उपलब्धता हो वहाँ फरवरी मार्च में भी झाड़ियाँ लगायी जा सकती हैं।

4. झाड़ियाँ लगाने की विधि :– झाड़ियाँ लगाते समय पौधों की वृद्धि, फूलने का समय, फूलों का रंग पौधों की ऊँचाई व आकृति आदि को ध्यान में रखा जाता है। पतझड़ वाली झाड़ियाँ कभी भी घर के सामने नहीं लगानी चाहिए। पौधे लगाते समय मिट्टी का पिण्ड (earth ball) टूटना नहीं चाहिए। पौधे रोपने का सर्वोत्तम समय सांय काल होता है। तैयार किये गये गड्ढे में पौधे को रख कर आसपास की मिट्टी को भली भाँति दबा देना चाहिए। पौधे लगाने के पश्चात् हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए।

5. उर्वरक देना – पौधों की उचित बढ़वार हेतु निम्न लिखित उर्वरकों का मिश्रण बनाकर 15 किग्रा/1000 वर्ग मीटर की दर से वर्ष में दो बार (मई एवं सितम्बर) डालना चाहिए।

यूरिया– 200 किग्रा

सिंगल सुपर फॉस्फेट– 500 किग्रा

म्यूरेट ऑफ पोटाश – 125 किग्रा

उर्वरक मिश्रण काट–छाँट के पश्चात् डालना चाहिए और उर्वरक डालने के बाद हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए।

6. सिंचाई – सिंचाई भूमि की किस्म मौसम आदि कारकों पर निर्भर करती है। फिर भी ग्रीष्म ऋतु में 3–4 दिन के अन्तर पर तथा शीत ऋतु में 10–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। वर्षा ऋतु में यदि लम्बे अन्तराल तक वर्षा न हो तो सिंचाई करनी चाहिए।

7. निराई गुड़ाई – झाड़ियों की समुचित बढ़वार के लिए वर्ष में 4–5 बार निराई गुड़ाई करना पर्याप्त होता है। निराई गुड़ाई से खरपतवारों के नष्ट होने के साथ–साथ भूमि मे वायु संचार और जल शोषण क्षमता बढ़ती है।

8. कटाई छँटाई –झाड़ियों में काट–छाँट का विशेष महत्व होता है। यह कार्य पौधों को विशेष आकार एवं ऊँचाई देने के लिए किया जाता है। काट छाँट का कार्य सर्दियों के अन्त में करना चाहिए। जिससे बसन्त में नयी शाखाऐं विकसित हो जाती है। जिन झाड़ियों में फूल पुरानी शाखाओं पर आते हैं उनमें काट छाँट फूल खिलकर समाप्त होने पर करनी चाहिए। काट–छाँट का कार्य तेजधार वाले सिकेटियर अथवा प्रूनिंग चाकू से करना चाहिए।

लताएँ (Climbers)

''लता अथवा बेल पौधों का वह समूह है जो किसी विशेष संरचनाओं के सहारे किसी दीवार, ढाँचे या वृक्षों पर ऊपर की ओर चढ़ते हैं।'' ये पौधे बिना किसी आधार के खड़े नहीं रह

पाते, ऊपर चढ़ने/फैलने के लिए जो विशेष संरचनाएँ पायी जाती हैं। उनमे प्रतान (Tendrils) परिवर्तित पर्णवृन्त (Modified leafstalks) वायुवीय अपस्थानिक जड़े (Rootlets) अथवा कंटक (Hook like thorns) प्रमुख है। कुछ लताएँ ऐसी होती है जो ऊपर नहीं चढ़ पाती और नीचे ही फैलती है इन्हें विसर्पी/बेल (Creepers) कहते हैं। कुछ बिना विशेष संरचनाओं के सहारे अथवा पौधों में लिपटकर चढ़ती है इन्हें वल्लरी/आरोही (Twinner) कहते हैं।

सामान्यतया लताओं को निम्नलिखित उपयोग में लिया जाता है –

1. मकान की दीवार, पार्किंग अथवा बड़े, छोटे हिस्से को विभक्त करने के लिए।

2. छाया करने के लिए छतर बनाने, लताकुंज को ढकने, या इनके द्वारा दरवाजे की शक्ल प्रदान करने के लिए।

3. वृक्ष या किसी ऊँचे नीचे स्थान पर खाली जगह को ढकने के लिए।

लताओं के प्रकार

वृद्धि की आदत (Growth habit), आकृति (Appearance), उपयुक्तता (Suitability) एवं उपयोगिता (Utility) के आधार पर लताओं को अनेक समूहों में बाँटा जा सकता है। कुछ प्रमुख समूह निम्न प्रकार है–

1. एक वर्षीय लताऐं (Annual climbers)– ऐसी लताएँ जो अपना जीवन चक्र (वृद्धि, विकास, पुष्पन एवं बीज आदि) एक वर्ष में पूरा कर लेती हैं एक वर्षीय लताएँ कहलाती हैं। ये मुख्य रूप से बीज बोकर तैयार की जाती हैं, और ये शीघ्रता से तैयार हो जाती हैं जैसे – स्वीट पी, मार्निंग ग्लोरी, नास्ट्रेशियम आदि।

2. पत्तियों वाली लताएँ – इस समूह में मुख्यतः सुन्दर पत्तियों के लिए उगाई जाने वाली लताएँ आती हैं। ये लताऐं छायादार स्थानों एवं अन्तः गृह उद्यानों के लिए सदैव उपयुक्त रहती हैं जैसे मनी प्लांट, मोनेस्टेरा, फिलोडेन्ड्रान, सतावर आदि।

3. सुन्दर पुष्पों वाली लताएँ – ये लताएँ मुख्य रूप से आकर्षक व रंग बिरंगे फूलों के लिए उगायी जाती हैं, जो एक वर्षीय, द्विवर्षीय या बहुवर्षीय हो सकती हैं जैसे बोगनविलिया, क्लोरोडेन्ड्रोन, बिगनोनिया, राखी बेल *(Passiflora edulis)*

4. सुगन्धित पुष्पों वाली लताएँ – इन लताओं के पुष्प सुगंधित होते हैं जिससे वातावरण सुगन्धित एवं आनन्ददायक बन जाता है। जैसे – गुलाब की किस्में, चमेली, रंगूनलता, क्लिमेटिस, बत्तखबेल आदि।

5. छायादार स्थान के लिए लताएँ – ऐसी लताऐं छायादार स्थानों पर अच्छी वृद्धि करती हैं। जैसे रेल्वे क्रीपर, क्लोरोडेन्ड्रोन, आइपोमिया, ऐसपेरागस, पोटेटोक्रीपर आदि।

6. बाड़ के रूप में लताएँ – इन लताओं को घरों बगीचों आदि में सुरक्षा हेतु बाड़ के रूप में लगाया जाता है जैसे बोगन विलिया, गुलाब, क्लोरोडेन्ड्रोन आदि।

7. गमलों के लिए लताएँ – इन लताओं को गमलों में लगाया जा सकता है। इन्हें विभिन्न मौसम में या घर में जगह बदल कर लगाया जा सकता है जैसे क्लाइटोरिया, एसपेरागस, पोथास (मनीप्लांट) आदि ।

लताओं का प्रसारण एवं देखभाल – अधिकांश लताओं को कलम एंव दाब विधि द्वारा वर्षा ऋतु में आसानी से तैयार किया जा सकता है। कुछ लताएँ जिनमें बीज बनते हैं। उनकी वर्षा ऋतु या शरद ऋतु में बीज बोकर पौधे तैयार करते हैं। तैयार पौधें को उखाड़कर वांछित स्थान पर लगा देते हैं। कलम द्वारा तैयार होने वाली लताओं में बोगनविलिया, विगनोनिया, क्लोरोडेन्ड्रोन, राखीबेल, बत्तख बेल आदि प्रमुख है। एन्टीगोनन, स्वीट पी, आइपोमिया, क्लाइटोरिया आदि बीज द्वारा तैयार की जाने वाली लताएँ है।

लताओं को मण्डप, गुंबजाकार या शिखराकार बनाया जा सकता है। घास के बड़े मैदानों अथवा फुटपाथ के दोनों तरफ लोहे की छतरियाँ बनाकर इन्हें काट–छाँटकर इस रूप में ढाला जा सकता है।

लताओं को प्रायः पानी की अधिक आवश्यकता रहती है इनकी कटाई–छँटाई फूल आने के मौसम से पहले करनी चाहिए, जिससे नई बढ़त अधिक होती है और फूल ज्यादा आते हैं कटाई–छँटाई के बाद उपयुक्त मात्रा में खाद उर्वरक देने से पौधों का स्वास्थ्य अच्छा रहता है। खाद के रूप में गोबर अथवा पत्तियों की सड़ी खाद का प्रयोग करना चाहिए साथ ही वर्ष दो बार मिथाइल पैराथियान चूर्ण 50 ग्राम/पौधा प्रयोग करना चाहिए जिससे दीमक आदि भूमिगत कीटों से बचाव होता रहता है।

मौसमी पुष्पों का अध्ययन

ऐसे पौधे जो अपना जीवन चक्र एक वर्ष या एक मौसम में पूरा कर लेते हैं मौसमी फूल वाले या एक वर्षीय पौधे कहलाते

हैं। इनमें से अधिकांश अपना जीवन 3 से 6 माह में पूर्ण कर लेते हैं। इस सीमित समय में इनका अंकुरण, वृद्धि, फूल व अन्त में बीज बनकर पौधा समाप्त हो जाता है। इनमें विभिन्न रंग व आकार पाये जाते हैं। मौसमी पौधों को विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उगाया जाता है जिनमें निम्नलिखित उद्देश्य प्रमुख है –

1. क्यारियों में लगाने के लिए – इन्हें सामूहिक रूप से क्यारियों में उगाया जाता है जिससे सुन्दर दृश्य प्रस्तुत किया जा सके। कभी–2 बाजार में बिक्री अथवा बीज उत्पादन के लिए भी उगाया जाता है। एस्टर, बरवीना, डहेलिया, गेंदा, पेंजी, फ्लाक्स, कार्नेशन, नस्टरसियम, साल्विया, जीनिया, बालसम, गैलार्डिया, पोर्चुलाका आदि क्यारियों में उगाने के लिए उपयुक्त रहते हैं।

2. गमलों में उगाने के लिए – निम्नलिखित पौधों को गमलों में उगाया जाता है – एस्टर, गेंदा, पेंजी, कार्नेशन, एन्टीराइनम, पिटूनिया, बरवीना जीनिया, फ्लाक्स, काक्स कोम्ब आदि।

3. सड़क या रास्ते के किनारों पर लगाने के लिए –
अजरेटम, कैण्डीटफ्ट, डहेलिया, फ्लाक्स, ब्राचीकोम, सूरजमुखी, पिटूनिया, स्वीटएलाइसम।

4. सुगन्ध के लिए – फ्लाक्स, नस्टरसियम, स्वीवट पी, स्वीट एलाइसम, स्वीट सुल्तान, स्टॉक, मिगनोनेट, कार्नेशन, बरबीना आदि।

5. शैल उद्यानों के लिए – बरवीना, नस्टरसियम, फ्लाक्स, जीनिया।

6. लटकती टोकरियों में लगाने के लिए– स्वीट एलाइसम, डैजी, बरवीना, नस्टरसियम, फ्लाक्स, पोर्चुलाका, टोरेन्सिया आदि।

7. ट्रेलिस को ढकने और स्तम्भों पर चढ़ाने के लिए– स्वीट पी, मार्निंग ग्लोरी, नस्टरसियम आदि।

8. भूमि ढकने के लिए – पेंजी, पोर्चुलाका, बरवीना, स्वीट एलाइसम आदि।

9. कटफ्लावर के लिए– कार्नेशन, एस्टर, स्वीट पी, स्वीट विलियम, हेलीक्राइसम, कार्नफ्लावर, स्वीट सुल्तान, डहेलिया, लार्कस्पर आदि।

10. खिले फूलों के लिए – सनफ्लावर, जीनिया, गैलार्डिया, क्राईसेन्थीमस, एस्टर, गेंदा आदि।

11. पत्तियों द्वारा सुन्दरता के लिए– अमरेन्थस, कोचिया, काक्सकोम्ब, एस्टर, गेंदा आदि।

12. छायादार क्षेत्र के लिए – साल्विया, सिनेरेरिया।

एक वर्षीय फूलों की खेती

1. भूमि का चयन एंव तैयारी– एक वर्षीय पौधों के लिए ऐसी खेती दोमट, भूमि का चयन करना चाहिए जिसमें पर्याप्त मात्रा में जीवांश पदार्थ, सिचाई एंव जल निकास की समुचित व्यवस्था हो। भूमि के नीचे कठोर परत नहीं होनी चाहिए।

भूमि के चयन के पश्चात् उसमें 30 सेमी. गहराई तक खुदाई करके कंकड पत्थर व फसल अवशेषों को बाहर निकाल देना चाहिए। 25–30 क्विन्टल गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद प्रति 1000 वर्गमीटर की दर से भूमि में मिलाते हैं। और भूमि को समतल कर देते हैं।

2. पौध तैयार करना – पौध तैयार करने के लिए 3.2मी. X 0. 6मी. आकार की भूमि से 15सेमी. ऊँची उठी क्यारियाँ बनाते हैं। दो क्यारियों के मध्य 30 सेमी. चौड़ी नाली रखते हैं। इन क्यारियों में 5 से 6 सेमी. की दूरी पर 0.5 से 1.0 सेमी. गहराई में बीजों की बुआई के बाद मिट्टी की बारीक परत से ढक देते हैं और सुबह–शाम झारे से पानी का छिड़काव करते हैं। दो से तीन दिन में बीजों का अंकुरण हो जाता है और 4 से 5 सप्ताह में पौध रोपने योग्य हो जाती है। यदि पौध में रोग अथवा कीड़ों का प्रकोप दिखाई दे तो आवश्यकतानुसार फफूँदीनाशी/कीटनाशी दवा का छिड़काव करते हैं।

3. पौध रोपण – जब पौध रोपने योग्य हो जाते हैं। तो उन्हें क्यारियों, गमलों आदि में रोप दिया जाता है। क्यारियों में पौधों की रोपाई उनकी ऊँचाई के अनुसार करते हैं अधिक ऊँचाई वाले पौधों का 45–50 सेमी., मध्यम ऊँचाई वाले 35–45 सेमी. व बौने पौधे 15–30 सेमी. की दूरी पर रोपण करते हैं। पौधों की रोपाई शाम के समय करनी चाहिए और रोपाई के पश्चात् हल्की सिचाई कर देनी चाहिए।

4. सिंचाई – आमतौर पर सिंचाई भूमि की किस्म, जलवायु और उगाये जाने वाले पौधों की प्रकृति के आधार पर निर्भर करती है। ग्रीष्मकाल में 4–5 दिन के अन्तर पर शीतऋतु में 10–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। वर्षा ऋतु में प्रायः सिचाई की आवश्यकता नहीं रहती है। रेतीली भूमि में दोमट भूमि की अपेक्षा अधिक सिंचाईयाँ करनी चाहिए।

5. खरपतवार नियन्त्रण – खरपतवारों की रोकथाम करने के लिए समय–2 पर खुर्पी की सहायता से खरपतवार निकालते रहना चाहिए। खरपतवार निकालते समय खुर्पी अधिक गहराई तक नहीं चलातें अन्यथा जड़े कटने का भय रहता है।

6. खाद व उर्वरक— पौधों की उचित बढ़वार की दृष्टि से निम्नलिखित उर्वरकों का मिश्रण उपयुक्त रहता है —

यूरिया— 100 किग्रा

सिगल सुपर फास्फेट— 200 किग्रा

म्यूरेट ऑफ पोटाश — 75 किग्रा

उपरोक्त मिश्रण 10 किग्रा प्रति 1000 वर्गमीटर की दर से भूमि में मिला देना चाहिए उर्वरक मिलाते समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।

7. पादप संरक्षण— एक वर्षीय पौधों में सामान्यतया विल्ट, फफूँदी, पत्ती धब्बा आदि रोग लगते है जिनकी रोकथाम के लिए डाइथेन एम—45 आदि कवकनाशी दवा का छिड़काव करना चाहिए। इन पौधों में बीविल, आरामक्खी, सफेदलट, आदि कीट हानि पहुँचाते हैं। इन कीटों की रोकथाम हेतु कीटनाशी दवाओं का छिड़काव करना चाहिए।

8. एक वर्षीय पौधों के बीज एकत्र करना— एक वर्षीय पौधों के बीज एकत्र करने के लिए फूल का चुनाव करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए—

(i) फूल का आकार बड़ा हो।

(ii) फूलों का रंग गहरा व चमकदार हो।

(iii) फूल स्वस्थ्य, रोग व कीट के प्रकोप से रहित होना चाहिए।

उपर्युक्त गुणों वाले फूलों का चुनाव करके टेग लगा देना चाहिए, और फूल पककर मुरझाने पर सावधानी से बीज निकालकर शीशे के वर्तन में सुरक्षित रख लेते हैं।

एक वर्षीय पौधों का वर्गीकरण

एक वर्षीय पौधों को उनके फूल आने के समय के अनुसार निम्न लिखित तीन भागों में वर्गीकृत किया जाता है —

1. वर्षाकालीन एक वर्षीय पौधे — इनके बीजों की बुआई अप्रैल—मई में करके जून—जुलाई में पौध को क्यारियों में लगाया जाता ये अधिक वर्षा सहन कर सकते है और वर्षा ऋतु में इन पर फूल खिलते हैं।

वर्षाकालीन पौधे (Rainy Season Annuals)

क्र.सं.	नाम	ऊँचाई(सेमी.में)	फूल / पत्ती का रंग
1	अमरेन्थस	45—90	लाल,पीली,बैगनी मिली हुई पत्तियाँ
2	हॉलीहॉक	150—200	सफेद,गुलाबी,पीले,लाल
3	कॉसमॉस	60—120	गुलाबी,लाल,सफेद,पीला,किरमिची
4.	डहेलिया	30—200	सफेद,बैगनी,पीला,क्रीमी,ताँबिया
5	मुर्गकेश	75—90	लाल,पीले,नारंगी,गुलाबी
6	गेंदा	20—90	पीला,नारंगी,ताँबिश,लाल
7	जीनिया	15—90	पीला,सफेद,नारंगी,गुलाबी,बैगनी,क्रीमी,भूरा
8.	सालविया	60—90	गुलाबी,सफेद,नीला
9.	सूरजमुखी	60—90	सफेद,पीला,किरमिची
10.	टोरेनिया	25—30	पीला, सफेद, नीला, गुलाबी

ग्रीष्मकालीन पौधे (Summer Season Annuals)

क्र.सं.	नाम	ऊँचाई(सेमी.में)	फूल / पत्ती का रंग
1	कोचिया	60—90	हरी और चमकीली पत्तियाँ
2	स्पाइडर पलांट	120—150	सफेद,गुलाबी
3	जीनिया	15—90	गुलाबी,सफेद,पीला,नारंगी, बैंगनी क्रीमी, भूरा
4.	अमरेन्थस	45—90	लाल, पीली बैगनी मिली हुई पत्तियाँ
5	मुर्गकेश	75—90	लाल,पीले,नारंगी,गुलाबी
6	कॉसमॉस	60—120	पीला,लाल, सफेद, किरमिची
7	सूरजमुखी	60—90	पीला,सफेद,किरमिची
8.	गॉमफ्रीना	25—60	बटन के समान गोल फूल
9.	बालसम	60—75	गुलाबी, लाल, पीला
10.	लोनिका	15—20	सफेद,पीला, गुलाबी, लाल

2. शरदकालीन एक वर्षीय पौधे– इन पौधों के बीज अगस्त–सितम्बर में पौधशाला में बोये जाते हैं और अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह में क्यारियों या गमलों में रोप दिये जाते हैं। इन पौधों में जनवरी से मार्च तक फूल खिलते हैं।

3. ग्रीष्मकालीन एक वर्षीय पौधे – इनके बीजों की बुआई दिसम्बर–जनवरी में की जाती है और तैयार पौधों की रोपाई फरवरी–मार्च में की जाती है। इन पौधों पर अप्रैल से जून तक फूल खिलते हैं।

उपर्युक्त तीनों प्रकार के पुष्पीय पौधों की जानकारी निम्न तालिका में दी गई है –

पुष्पीय परिबन्ध/शाकीय किनारा (Herbaceous border)

''जब एक वर्षीय मौसमी फूलों को लॉन, सड़क, अथवा रास्तों के समान्तर बनायी गयी लम्बी क्यारियों में ऊँचाई के अनुसार एक

शरदकालीन पौधे (Winter Season Annuals)

क्र.सं.	नाम	ऊँचाई(सेमी.में)	फूल/पत्ती का रंग
1	अजेरेटम	15–45	नीला,पीला,सफेद
2	एन्टीराइनम	15–75	सफेद, पीला, लाल, मिश्रित
3	एस्टर	15–90	सफेद गुलाबी, गहरा लाल, नीला, मिश्रित
4.	लार्कस्पर	30–90	सफेद, लाल, नीला, नारंगी
5	स्वीट सुल्तान	45–90	सफेद, गुलाबी, नीला, बैंगनी
6	स्वीट विलियम	15–45	सफेद, गुलाबी, लाल व उनके मिश्रण
7	एस्कोल्जिया पॉपी	30–40	लाल, पीला, नारंगी
8.	कार्नेशन	45–90	लगभग सभी रंग व उनके मिश्रण
9.	जिप्सोफिला	30–40	सफेद, बैंगनी, लाल
10	क्राइसेन्थीमम	50–100	पीला, क्रीमी, सफेद
11	कैण्डीटफ्ट	25–40	सफेद, बैंगनी
12	स्वीट पी	30–40	काले के अलावा सभी रंग
13	लाइनम	45–60	लाल व आसमानी
14	लुपिन	25–75	सफेद, नीला, लाल पीला
15	फ्लाक्स	15–45	काले के अलावा सभी रंग
16	कार्नफ्लावर	45–60	बैंगनी, पीला, लाल
17	पिटूनिया	40–50	पीला, नारंगी
18	बरवीना	20–30	सफेद, गुलाबी, नीला, पीला, बैंगनी, लाल
19	पैंजी	20–30	सफेद, गुलाबी, नीला, पीला, बैंगनी, लाल
20	क्लार्किया	60–90	सफेद, नारंगी
21	लाइनेरिया	25–35	सफेद, लाल, पीला, नारंगी
22	डेजी	10–15	सफेद, पीला, नारंगी, गुलाबी
23	सिनेरेरिया	50–60	काले व हरे के अलावा सभी रंग
24	निगेला	45–60	सफेद, नीला, बैंगनी
25	सपोनेरिया	50–60	लाल,पीला, बैंगनी
26	स्टॉक	50–60	सफेद, पीला, नीला, लाल
27	मिगनोनेट	30–45	सफेद, क्रीमी, लाल, बैंगनी
28	हैलीक्राइसम	75–100	सफेद, पीला, लाल
29	कैलेण्डुला	30–40	पीला, नारंगी, क्रीमी

पट्टी के रूप में उगाया जाता है तो इस प्रकार बने किनारों को शाकीय किनारा कहते हैं''

शाकीय किनारा दो प्रकार का होता है –

1. एकल दिशा शाकीय किनारा (Single Fronted Herbaceous border)– यह शाकीय किनारा लॉन के किनारे या सड़क के किनारे–2 बनाया जाता है। इसमें लम्बे पौधे पीछे की ओर, मध्यम ऊँचाई वाले पौधे मध्य में तथा कम ऊँचाई वाले पौधे सामने की तरफ लगाये जाते है। इस प्रकार के बार्डर में एक दिशा से फूलों की सुन्दरता दिखाई देती है। इसलिए इसे एकल दिशा शाकीय किनारा कहते हैं।

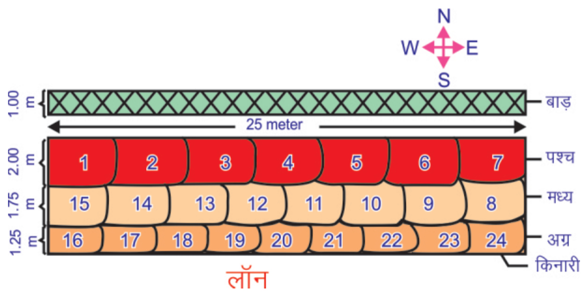

Layout of a Hervaceous Border

रेखाचित्र– एक दिशा शाकीय किनारा

2. दो दिशा शाकीय किनारा (Double fronted Herbaceous border)– यह शाकीय किनारा सामान्यतः लान के मध्य में बनाया जाता है। इसमें पौधे पाँच पंक्ति समूहों में लगाये जाते हैं। लम्बे पौधे मध्य में उनके दोनों ओर मध्यम ऊँचाई वाले पौधे तथा किनारों पर कम ऊँचाई वाले पौधे लगाये जाते हैं। ऐसे बार्डर में लगे पौधों में फूलों की सुन्दरता दोनों तरफ से दिखाई देती है।

शाकीय किनारा बनाने के सिद्धान्त–

1. शाकीय किनारा बनाने के लिए ऐसे स्थान का चयन करना चाहिए जहाँ सुबह की धूप आसानी से आती हो।
2. लॉन व सड़क के किनारे एक दिशा शाकीय किनारा तथा लान के मध्य में दो दिशा शाकीय किनारा बनाना चाहिए।
3. एक दिशा शाकीय किनारे के पीछे बाड़ या दीवार होनी चाहिए।
4. बार्डर के सामने की पंक्ति व रास्ते के बीच जीवित पौधों अथवा ईटों की किनारी (Edge) बनानी चाहिए।
5. बोर्डर में पीछे की क्यारियों की चौड़ाई अधिक, मध्यम क्यारियों की मध्यम तथा आगे की क्यारियों की चौड़ाई कम रखी जाती है।
6. क्यारियाँ एक दूसरे से सटी–हुई होनी चाहिए , जिससे उनमें लगे पौधे एक समूह में दिखाई दे सकें।
7. पौधों की उनकी ऊँचाई के क्रम में लगाना चाहिए। पीछे की क्यारियों में लम्बे, बीच की क्यारियों में मध्यम ऊँचाई वाले तथा सामने की क्यारियों में छोटे पौधे लगाने चाहिए।
8. एक समय पर फूलने वाले पौधे एक क्यारी में लगाने चाहिए।
9. पौधे हमेशा रंग योजना (Colour scheme) के अनुसार लगाने चाहिए।
10. देर से फूल देने वाले पौधे जल्दी तथा शीघ्र फूल देने वाले पौधे देर से लगाने चाहिए। जिससे सभी पौधों पर एक साथ फूल आ सकें।

रंग योजना (Colour Scheme)

प्रकृति में प्रमुख रंग बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी व लाल (VIBGYOR) हैं। अन्य रंग इन्हीं रंगों के आपसी संयोग से बनते है जिन्हे टरसियरी रंग कहते हैं। इन रगों के अनुसार पौधे लगाना रंग योजना कहलाता है। सामान्यतः तीन प्रकार की रंग योजना प्रचलित है–

1. एक रंगी योजना (Monochoromatic) – इस योजना में किसी एक रंग विशेष (जैसे केवल लाल या पीले य नीले रंग) के फूल वाले पौधों को लम्बाई के अनुसार शाकीय बार्डर में लगाया जाता है।
2. सम्बंधी रंग योजना (Related Colour Scheme)– इसमें दो या तीन नजदीकी रंगों को शामिल किया जाता है। जैसे– क्रीमी, क्रीमी पीले, हल्के पीले, व गहरे पीले रंग या नारंगी –पीला–हल्का पीला। यह रंग योजना मनभावन दिखाई पड़ती है। इसे हारमोनियस रंग योजना (Harmonious Colour scheme) भी कहते हैं।
3. विपरीत रंग योजना (Contrast Colour scheme)– इस योजना में पौधों की ऊँचाई के अनुसार विरोधी रंग के फूल वाले पौधे लगाये जाते है। जैसे– पीला और नारंगी, बैंगनी और पीला, लाल और हरा, सफेद एक दूसरे के विरोधी रंग है। इन रंगों को एक साथ लगाने से शाकीय बार्डर अधिक सुन्दर दिखायी देता है।

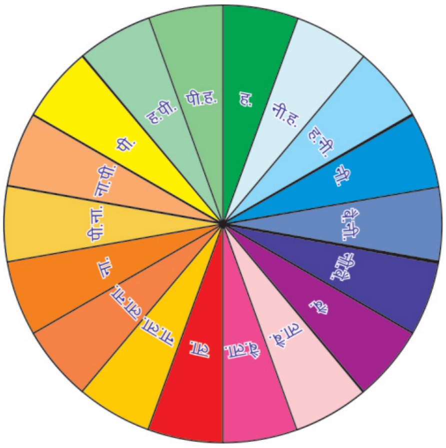

1–18 शेड वाला रंग चक्र

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न–

1. सुन्दर पुष्प वाली लता है –
   (अ) सतावर (ब) मनीप्लान्ट
   (स) रंगून लता (द) बोगनविलिया
2. शरद कालीन एक वर्षीय फूलवाले पौधों के बीजों की बुआई का उचित समय है –
   (अ) अगस्त से सितम्बर (ब) जनवरी से मार्च
   (स) अप्रेल से मई (द) दिसम्बर से जनवरी
3. अनौपचारिक शैली उद्यानों में रास्ते बनाये जाते हैं –
   (अ) समतल (ब) सीधे
   (स) चौड़े एवं सुव्यवस्थित (द) टेड़े मेड़े एवं ऊँचे नीचे
4. सुन्दर पत्तियों वाले झाड़ी है –
   (अ) क्रोटोन स्पसीज
   (ब) टिकोमा स्टेन्स
   (स) जैसमिनम सेमवेक
   (द) डुरैन्टा प्लयूमेराई
5. जब वृक्षों को सड़क के दोनों किनारों पर सीधी पंक्ति में लगाया जाता है तो उसे कहा जाता है –
   (अ) झुरमुट (ब) पुष्पीय परिबन्ध
   (स) लान (द) एवेन्यू

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

6. सुन्दर फूल वाले किन्ही चार वृक्षों के नाम लिखिए।
7. लताओं से आप क्या समझते है ?
8. किन्ही पाँच शरदकालीन फूल वाले पौधों के नाम व फूलो के रंग लिखिए।
9. पुष्पीय परिबन्ध किसे कहते हैं ?

लधूत्तरात्मक प्रश्न–

10. अलंकृत बागवानी का आर्थिक महत्व लिखिए।
11. फूल आने के समय के अनुसार एक वर्षीय पौधों का वर्गीकरण कीजिए।
12. उपयोगिता के आधार पर उद्यानों के कौन–2 से प्रकार है?
13. निजी उद्यान के भागों का वर्णन कीजिए।
14. आपैचारिक शैली उद्यान एवं अनौपचारिक शैली उद्यान में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
15. अलंकृत बागवानी का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ता है?
16. झाड़ियाँ लगाने के सामान्य सिद्धान्त लिखिए।
17. एकल दिशा एवं दो दिशा शाकीय किनारा में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न–

18. अलंकृत बागवानी का क्या भविष्य है? लिखिए।
19. एवेन्यू किसे कहते है ? राष्ट्रीय मार्ग एवेन्यू के बारे में लिखिए।
20. झाड़ी किसे कहते है ? झाड़ियों के सामान्य उपयोग लिखिए।
21. लताओं के प्रमुख प्रकार कौन से है ? प्रत्येक के दो–2 उदाहरण लिखिए।
22. एकवर्षीय फूलों की खेती के प्रमुख बिन्दुओं का वर्णन कीजिए।
23. शाकीय किनारा बन्दी क्या है ? इसे बनाने के सिद्धान्त लिखिए।
24. फूलवाले पौधे लगाने की रंग योजना के बारे में लिखिए।

उत्तर माला – 1. (स) 2. (अ) 3. (द) 4. (अ) 5. (द)

अध्याय–12
फूलों की खेती
(Cultivation of flowers)

गुलाब (Rose)

वानस्पतिक नाम– रोजा इण्डिका एल. (*Rosa indica L.*)
कुल रोजेसी (Rosaceae)

गुलाब अपनी सुन्दरता के कारण ही विश्वविख्यात नहीं है, अपितु सुगन्ध एवं व्यावसायिक उपयोग के कारण भी इसका आर्थिक एवं औद्योगिक महत्व है। यही कारण है कि गुलाब की खेती भारतवर्ष में प्रतिदिन बड़े पैमाने पर बढ़ती जा रही है। पुष्प जगत में गुलाब का एक विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण स्थान है। सुन्दरता एवं प्रेम के प्रतीक गुलाब पर आदि काल से ही विश्व भर के लेखकों ने इसकी सुन्दरता के बारे में अनेक काव्य लिखे हैं। सौन्दर्य एवं सुगन्ध में गुलाब के पुष्प का प्रथम स्थान होने के कारण इसे ''पुष्पराज'' की उपमा दी गयी है। अलंकृत उद्यान गुलाब के बिना पूर्ण नही समझा जाता है। भारत में गुलाब की खेती प्राचीन काल से ही होती चली आ रही है। गुलाब के इत्र की खोज का श्रेय बेगम नूरजहां को जाता है। उद्यान में गुलाब को सुन्दरता के लिए रोजरी बनाने, बेल के रूप में, परगोला बनाने, दीवार के सहारे लगाने, क्यारियों में, गमलों में एवं बाड़ आदि के रूप में क्यारियों में लगाया जाता है। गुलाब का उपयोग पूजा के अलावा गुलाब जल, गुलकन्द, गुलाब का शरबत व इत्र बनाने में किया जाता है। गुलाब के इत्र में चेती गुलाब का इत्र सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। गुलाब के सभी उत्पाद उत्तम गुणों वाले होते हैं तथा काफी महंगे दामों पर बिकते हैं। विदेशी मुद्रा भी अर्जित करने में इसका महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। राजस्थान में चेती गुलाब की खेती उदयपुर क्षेत्र के नाथद्वारा और खमनोर (हल्दी घाटी) तहसीलों में की जाती है। साथ ही पुष्कर और जयपुर क्षेत्र में क्रमशः बारहमासी गुलाब (रोजा इन्डिका) एवं लाल गुलाब व्यावसायिक स्तर पर उगाए जाते हैं। पुष्कर में देशी गुलाब की व्यावसायिक खेती बड़े स्तर पर की जाती है। पुष्कर क्षेत्र के ताजा गुलाब मंदिर, मस्जिद में पूजा अर्चना के अतिरिक्त शादी विवाह, उत्सव, अतिथि स्वागत सत्कार, गुलकन्द, इत्र व गुलाब जल बनाने में उपयोग में लिए जाते हैं ।

गुलाब के प्रकार (Types of Roses)

गुलाब को सामान्यतः दो भागों में विभाजित किया जाता है :–

1. जंगली गुलाब (Wild spp.)
2. खेती योग्य गुलाब (Cultivated spp.)

1. जंगली गुलाब – इस वर्ग की उत्पत्ति भारत में मानी जाती है। देश के विभिन्न भागों में इस वर्ग का गुलाब प्राकृतिक अवस्था में पाया जाता है। इस वर्ग की कुछ प्रमुख जातियाँ निम्न हैं :–

1. *रोजा मोस्चाटा* (*Rosa moschata*)
2. *रोजा फोयटीडा* (*Rosa foetida*)
3. *रोजा माइक्रोफिला* (*Rosa microphyla*)
4. *रोजा क्लीनोफिला* (*Rosa clinophylla*)

2. खेती योग्य गुलाब – इस वर्ग के गुलाब का उपयोग वर्तमान में गुलाब की खेती करने में किया जाता है। यह वर्ग गुलाब के जंगली जातियों के आपस में संकरण (Hybridization) करा कर उत्पन्न किये गये है। कुछ प्रमुख जातियाँ निम्न प्रकार हैं :–

1. *रोजा डेमेसिना* (*Rosa damascena*)
2. *रोजा मल्टीफ्लोरा* (*Rosa multiflora*)
3. *रोजा मोस्चाटा* (*Rosa moschata*)
4. *रोजा चाइनेन्सिस* (*Rosa chinensis*)
5. *रोजा फोयटीडा* (*Rosa foetida*)
6. *रोजा विचूरियाना* (*Rosa wichuraiana*)

बागों एवं खेतों में उगाये जाने वाले गुलाब को निम्नलिखित वर्गो में रखा जा सकता है :–

1. हाइब्रिड टी. (Hybrid T.) – इसके फूल बड़े, आकर्षक विभिन्न प्रकार के रंग एवं एक टहनी पर एक ही

फूल लगता है। यह संसार में सबसे प्रचलित गुलाब है। इस वर्ग की कुछ प्रमुख किस्में हैं – सुपर स्टार, ब्लू मून, फर्स्ट प्राइज, पैराडाइज, अर्जुन, अनुपमा, भीम, अपोलो आदि।

2. फ्लोरीबन्डा (Floribunda) – यह गुलाब पोलिएन्था एवं हाइब्रिड टी के संकरण से तैयार किया गया है। इसमें फूल अधिक व गुच्छो में लगते है। बहुत कम फ्लोरीबन्डा सुंगधित होते हैं। इस वर्ग की कुछ प्रमुख किस्में रेडगोल्ड, क्वीन एलिजाबेथ, हिमाग्नी, बंजारन, मधुरा, चितचोर, मोर्निंग सन, मोहनी, प्रिया, प्रेमा आदि हैं।

3. पोलिएन्था (Poliantha) – इस वर्ग के गुलाब के फूल आकार में छोटे होते हैं, लेकिन फूल गुच्छों में लगते हैं। एक ही गुच्छे में अनेक फूल होते हैं। इस वर्ग की प्रमुख किस्में है – अंजनी, प्रीति, नर्तकी, स्वाती, रश्मि, पिंक शावर्स आदि।

4. मिनिएचर (Miniature) – इस वर्ग के गुलाब को बेबी गुलाब या लघु गुलाब के नाम से जाना जाता है। इसके पौधे, पत्तियाँ एवं फूल छोटे आकार के होते हैं। इनको साधारणतया गमलों में उगाने में प्रयोग किया जाता है। इस वर्ग की प्रमुख किस्में हैं – लालीपॉप, मिक्सी, नटखट, गोल्ड स्टार, डार्क ब्यूटी, चन्द्रिका, रेनबो आदि।

5. लता गुलाब (Climbing rose) – फ्लोरीबन्डा एवं हाइब्रिड टी गुलाब की शाखाएँ लता की तरह वृद्धि करती हैं, जिसके कारण इनको लता गुलाब कहा जाता है। मार्शलनील, देहली पिंक पर्ल एवं व्हाइट पर्ल, लाल किला, पिन्च ऑफ गोल्ड आदि कुछ प्रमुख किस्में हैं।

जलवायु (Climate) – गुलाब का पौधा किस्म के अनुसार समशीतोष्ण जलवायु से लेकर उष्ण जलवायु तक, सफलता से उगाया जा सकता है। पौधे अधिक तापमान व लू को सहन नही कर सकते, इससे फूलों का रंग फीका होकर फूल बिखर जाते है। गुलाब की अच्छी खेती के लिए 15^0 से 27^0 सेंटिग्रेड तापमान उपयुक्त माना गया है।

भूमि एवं उसकी तैयारी (Soil and its preparation) : गुलाब की अच्छी पैदावार के लिए बलुई दोमट से हल्की चिकनी मिट्टी जिसमें अधिक मात्रा में जीवांश पदार्थ होते हैं, अधिक उपयोगी पाई गई है। साधारणतया गुलाब जैसे हाइब्रिड टी, फ्लोरीबण्डा तथा अन्य गुलाब मृदा पी. एच. मान 6.0 से 7.5 तक उगाए जा सकते हैं परन्तु चेती गुलाब 9.0 पी.एच.मान तक की भूमि में भी उगाया जा सकता है।

मई–जून माह में भूमि की गहरी जुताई कर 10–15 दिन के लिए धूप में खुला छोड़ा जाता है। इसके बाद 2–3 बार अच्छी जुताई कर 250–300 क्विण्टल गोबर की खाद एवं 20–25 क्विण्टल सिंगल सुपर फॉस्फेट मिट्टी में मिलाई जाती है।

पौध प्रवर्धन (Propogation) : गुलाब का प्रवर्धन प्रायः बीज, कलम, लेयरिंग तथा कलिकायन द्वारा किया जाता है। लेकिन कलम एवं कालिकायन इसके प्रवर्धन की व्यावसायिक विधियाँ हैं। चेती तथा देशी गुलाब दोनों का प्रवर्धन मुख्यतः कलमों एवं सकर्स द्वारा किया जाता है। कलमें 10–12 माह पुरानी परिपक्व तनों से ली जाती हैं। दिसम्बर माह में जब इन गुलाब की कटाई–छँटाई की जाती है तब ये कलमें काट ली जाती हैं। कलमों को पौधशाला की तैयार क्यारियों में 10 x 30 सेन्टीमीटर के फासले पर लगा देना चाहिए। कलमों को आई.बी. ए. 400 पी.पी.एम. सांद्रता के घोल से शोधित कर दिया जाए तो शीघ्र एवं अधिक संख्या में कलमों से जड़ें निकल आती हैं। सकर्स द्वारा रोपाई के लिए पूरे पौधे को उखाड़ लेते हैं और उसे 4–5 टुकड़ों में अलग कर लेते हैं। प्रत्येक टुकड़े में जड़े होती हैं ओर इन्हीं जड़ वाले टुकड़ों को (सकर्स) रोपाई के काम में लेते हैं। सकर्स द्वारा लगाए पौधों में दूसरे वर्ष फूल आने लगते हैं।

संकर गुलाब (Hybrid rose) के पौधे तैयार करने के लिए पहले कलम विधि द्वारा मूलवृन्त (Root stock) तैयार किया जाता है। मूलवृन्त तैयार करने के लिए गुलाब की *रोजा इंडिका, रोजा बोरबोनीआना, रोजा मल्टीफ्लोरा, रोजा चाइनेन्सिस* आदि जातियों का उपयोग किया जाता है। इन सबकी कलमें शीत काल में रोपाई कर तैयार की जाती है। एक वर्ष पुरानी कलमों पर फरवरी माह में भूमि से 4–5 इंच ऊपर "टी" व "शील्ड" कालिकायन करते है। कालिकायन के दो सप्ताह बाद कली अंकुरित हो कर पौधा तैयार होने लगता है।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizers) – गुलाब एक उपजाऊ भूमि की फसल है तथा बहुवर्षीय होने के कारण इसे वर्ष भर खाद एवं उर्वरकों द्वारा पोषण पहुँचाना अत्यन्त आवश्यक है। गुलाब में कटाई–छँटाई, पादप वृद्धि, पुष्पन के समय पोषण का विशेष ध्यान रखना चाहिए। इसके लिए गोबर की खाद 25 से 30 टन प्रति हेक्टेयर खेत की तैयारी के समय खेत में मिलानी चाहिए तत्पश्चात् कटाई–छँटाई के समय 8–10 किलोग्राम गोबर की खाद/पौधा की दर से देनी चाहिए।

साथ ही कटाई–छँटाई के समय 50 ग्राम/पौधे की दर से नीम खली भी देनी चाहिए। उर्वरकों द्वारा 200 किलोग्राम नत्रजन एवं 30 किलोग्राम फॉस्फोरस देना चाहिए। इसके लिए जुताई के समय नत्रजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस की पूरी मात्रा दें तथा 30 दिन पश्चात् नत्रजन की बाकी की आधी मात्रा भी डाल दें।

साथ ही उर्वरक मिश्रण जिसमें एक भाग यूरिया, तीन भाग सुपर फॉस्फेट तथा दो भाग पोटैशियम सल्फेट का हो, तैयार करें। इस मिश्रण का 40 ग्राम/पौधे की दर से कटाई–छँटाई के बाद 15 दिन के अंतराल से तीन बार दें।

पर्ण छिड़काव द्वारा भी उर्वरक दिए जा सकते हैं। इसके लिए 1.25 ग्राम यूरिया तथा 1.25 ग्राम पोटैशियम डाइ हाइड्रोजन फॉस्फेट एक लीटर पानी में, का छिड़काव कटाई के बाद किया जा सकता है। उर्वरकों के साथ–साथ छिड़काव के घोल में कीटनाशक जैसे मैलाथियान या रोगोर भी डाले जा सकते हैं। सूक्ष्म तत्वों के पर्ण छिड़काव भी गुलाब में करने चाहिए। इसके लिए फेरस सल्फेट 2 ग्राम तथा बुझा चूना 1 ग्राम, एक लीटर पानी में, मैग्नीशियम सल्फेट 2–3 ग्राम प्रति लीटर पानी मैंगनीज सल्फेट 2 ग्राम तथा 1 ग्राम बुझा चूना प्रति लीटर की दर से, इन सभी सूक्ष्म तत्वों का अलग–अलग छिड़काव कर सूक्ष्म तत्वों की कमी आसानी से दूर की जा सकती है।

सिंचाई (Irrigation) : गुलाब में अधिक एवं नियमित पुष्प उत्पादन के लिए सिंचाई महत्वपूर्ण है। गर्मी के मौसम में सप्ताह में एक–दो बार तथा शीतकाल में 15–20 दिन के अन्तर पर सिंचाई करते हैं। कटाई–छँटाई के समय पौधो को आराम देने के लिए सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए। ताकि उसमें नई वृद्धि नही हो सके।

कटाई–छँटाई – कृन्तन गुलाब की खेती में एक अति आवश्यक क्रिया है। पौधों से अच्छे, स्वस्थ, आकर्षक व अधिक मात्रा में फूल प्राप्त करने के लिए वर्ष में एक बार अक्टूबर से जनवरी माह में गुलाब में कृन्तन की क्रिया की जाती है। गुलाब में जाति के अनुसार कटाई–छँटाई का समय तथा उसकी मात्रा निर्धारित की जाती है। कटाई–छँटाई में रोगग्रस्त, सूखी, उलझी हुयी शाखाऐं सबसे पहले काटी जाती हैं, इसके बाद उसकी जाति के अनुसार कृन्तन की क्रिया की जाती है। कृन्तन के सामान्य नियम निम्नांकित है :–

1. सूखी, मरी हुई व रोगग्रस्त शाखा को काट देना चाहिए।
2. जो शाखाएँ एक–दूसरे में उलझ कर पौधे को सघन बनाती है, उनको भी काट कर निकाल देना चाहिए।
3. मूलवृन्त (Rootstock) के किसी भाग से कोई शाखा निकल रही है तो उसको काट देना चाहिए।
4. स्वस्थ व सुन्दर शाखाओं को जमीन से 30 सेमी. ऊँचाई तक रखकर शेष भाग को काट देना चाहिए।
5. कृन्तन के स्थान पर कली बाहर की तरफ रहनी चाहिए।
6. कटाई–छँटाई के तुरन्त बाद कटे भाग पर ब्लाइटोक्स या बोर्डो पेस्ट का लेप करना चाहिए।

हाईब्रिड 'T' व फ्लोरीबण्डा के लिए कटाई–छँटाई का उपयुक्त समय सितम्बर से मध्य अक्टूबर रहता है। कटाई–छँटाई के लिए पौधे पर से सभी कमजोर व रोगग्रस्त भाग हटा देने चाहिए। पौधे के केन्द्र में से अत्यधिक घनी शाखाओं को काट देना चाहिए। हाईब्रिड 'T' गुलाब को 5–6 आँख तक काटना चाहिए। फ्लोरीबण्डा व पोलीएन्था में केवल मृत एवं रोगग्रस्त शाखाओं को हटाया जाता है।

चेती गुलाब की कटाई–छँटाई 15 दिसम्बर से जनवरी के प्रथम सप्ताह तक पूरी कर लेनी चाहिए। इससे पहले या बाद में काटने से उपज बहुत कम होगी। चेती गुलाब के पौधों की कटाई–छँटाई भूमि की सतह से 45 सें.मी. की अधिक ऊँचाई रख कर की जावे जिससे प्रति इकाई अधिक उपज मिलती है।

कलियों को निकालना (Disbudding) – गुलाब की संकर किस्मे कलियाँ, गुच्छों में उत्पन्न करती हैं। यदि इन सबको फूल बनने दिया जावे तो फूलों का आकार छोटा रह जाता है। इसलिए सजावट, प्रदर्शनी व सुन्दरता के लिए आकर्षक बड़े आकार के फूल प्राप्त करने के लिए गुच्छे के मध्य की कली को छोड़कर शेष अन्य कलियों को तोड़ देना चाहिए। यह कली बड़े तथा आकर्षक फूल पैदा करती है।

विंटरिंग (Wintering) – विंटरिंग के द्वारा कमजोर शाखाओ को स्वस्थ बनाना तथा बड़े आकार के फूल प्राप्त करना है। इस क्रिया में पौधे को कृत्रिम रूप से आराम दिया जाता है। इसमें पौधे के स्वास्थ्य एवं धूप की तीव्रता के अनुसार 10–15 दिन के लिए पानी रोक दिया जाता है तथा जड़ो के आस–पास से मिट्टी हटाकर उन्हे 3–4 दिन के लिए खुला रखा जाता है। इस क्रिया से पौधों की पत्तियाँ गिर जाती है। इसके पश्चात् मिट्टी एवं खाद का मिश्रण भर कर सिंचाई कर दी जाती है।

कीट एवं रोग (Insect pests and disease):

शल्क कीट (स्केल) – यह कीट तने तथा टहनियों पर बहुत अधिक मात्रा में चिपके रहते हैं, इससे पौधा कमजोर होकर सूख जाता है। नियन्त्रण हेतु पौधों का कृन्तन कर कीटग्रस्त भाग को इकट्ठा करके नष्ट कर देवें। मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. 1.5 मिलीलीटर या डाइजिनान या मिथाइल डिमेटान एक मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

मोयला – यह कीट कोमल टहनियों, पत्तियों, कलियों से रस चूसता है, जिससे पौधों की वृद्धि रूक जाती है एवं फूल की गुणवत्ता प्रभावित होती है। नियन्त्रण हेतु मैलाथियान 50 ईसी अथवा डाइमिथोएट 30 ईसी एक मिलीलीटर पानी की दर से छिड़कें। नीम या करंज तेल का 2 प्रतिशत का छिड़काव करें।

तनाछेदक मक्खी – मैलाथियान 50 ईसी अथवा डाइमिथोएट 30 ईसी एक मिलीलीटर की दर से छिड़काव करें।

थ्रिप्स – यह कीट पत्तियों एवं पुष्प की पंखुडियों से रस चूस कर नुकसान करता है। नियन्त्रण हेतु मिथाइल ऑक्सीडेमेटान या डाइमिथोएट या एसीफेट या इमिडाक्लोरोपिड 5 मिलीलीटर प्रति दस लीटर पानी की दर से 2 या 3 बार 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

स्पाइडर माईट – नियन्त्रण हेतु क्षतिग्रस्त हिस्सों को काटकर जला दें तथा पौधे पर माइटेक या इथियान 5 मिलीलीटर प्रति दस लीटर पानी के घोल का 2–3 बार 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

व्याधियाँ (Diseases) :

चूर्णीफंफूद (पाउडरी मिल्ड्यू) – यह रोग पत्तियों एवं कलियों पर सफेद चूर्ण के धब्बे के रूप में आक्रमण करता है। इससे पत्तियाँ पीली पड़कर झड़ जाती है। नियन्त्रण हेतु कैराथेन एल. सी. 1 मिलीलीटर या कैलेक्सिन 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के घोल का 10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

सूखा रोग (डाई बैक) – गुलाब के पौधों में कृन्तन के बाद इस रोग से प्रभावित टहनियाँ ऊपर से नीचे की ओर सूखने लगती हैं तथा धीरे–धीरे पूरा पौधा सूख जाता है। नियन्त्रण हेतु सूखे भाग को काट–छाँट करके हटा दें तथा इसमें बोर्डो मिश्रण या गुलाब पेस्ट (कॉपर कार्बोनेट + रेड लेड + अलसी का तेल 4:4:5 के अनुपात में) कटी टहनियों के सिरे पर लगा दें।

एन्थ्रेक्नोज – इस रोग से प्रभावित पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते है और ग्रसित भाग मुरझाकर सूखने लगता है। इसकी रोकथाम हेतु मैन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

तुड़ाई व उपज (Harvesting and Yield):

फूलों की कटाई–तुड़ाई – चेती गुलाब के फूलों की तुड़ाई सूर्योदय होते ही चालू कर देनी चाहिए तथा आठ बजे से पूर्व सम्पूर्ण कर लेनी चाहिए क्योंकि सूर्य निकलने के बाद जैसे–जैसे ताप बढ़ता है फूलों में तेल की मात्रा कम हो जाती है और तेल की मात्रा कम होने से फूलों का गुण कम होता है। तोड़े गए फूलों का शीघ्र ही आसवन या अन्य उपयोग कर लेना चाहिए। हाइब्रिड 'T' व फ्लोरीबण्डा फूलों, जिनसे हमें कट फ्लावर बनाने हों, की कटाई कली अवस्था पर ही की जाती है। कली अवस्था में जब पुष्प में रंग पूर्ण रूप से विकसित हो गया हो तथा बाहरी 1 या 2 पंखुड़ियाँ बाहर की तरफ मुड़ना शुरू हो गई हों उस समय तुड़ाई सबसे उपयुक्त रहती है। फूलों को हमेशा 10–45 सें.मी. की शाखा के साथ ही काटा जाता है।

फूलों का रखरखाव – कट फ्लावर के लिए फ्लोरीबण्डा व हाइब्रिड ' T' के पुष्पों को कटाई के तुरन्त बाद प्लास्टिक की बाल्टी में जिसमें पानी, निर्जर्मीकारक व परिरक्षक (सिल्वर थायोसल्फेट) मिला हो; रखना चाहिए। फिर बाल्टी को पूर्वशीतलन कक्ष में या छायादार छप्पर की झोपड़ी में रखना चाहिए। छप्पर की छत व दीवारों पर पानी छिड़कते रहने से छप्पर के अन्दर तापमान कम व आर्द्रता अधिक बनी रहती है।

चेती गुलाब के फूलों को तोड़ने के बाद टोकरियों में हल्के से रखना चाहिए। फूलों को इस तरह से रखना चाहिए कि ये टूटने न पाएं। टूटी हुई पंखुड़ियों को छोड़ देना चाहिए। यदि फूलों की मात्रा अधिक है और शीघ्र ही आसवन सम्भव नहीं है तो फूलों को सीमेन्ट से बने टैंकों में जिनमें ठण्डा पानी भरा हो, रखना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो आसवन यन्त्रों को खेतों के नजदीक रखना चाहिए जिससे फूलों के रखरखाव में अधिक फूल व समय नष्ट न हो।

उपज – औसत उपजाऊ भूमि से प्रति हेक्टेयर औसतन 2500–3000 किलोग्राम फूल प्राप्त होते हैं। फूलों में तेल की मात्रा 0.03 से 0.045 प्रतिशत तक होती है। एक बार पौधा लगाने के बाद इसकी उपज 10–12 साल तक मिलती है।

फूलों का व्यावसायिक उपयोग – गुलाब जल का प्राचीन काल से ही बहुत महत्व रहा है और इसे औषधियों तथा सौन्दर्य पदार्थों के निर्माण में उपयोग किया जाता है। आजकल इसका उपयोग आई लोशन तथा आई ड्राप्स में भी किया जाने लगा है। फूलों के जल आसवन से गुलाब जल तैयार होता है। आसवन पात्र में एक किलोग्राम फूलों में तीन लीटर पानी (1:3) के हिसाब से मिलाकर आसवन पात्र को 2 से ढाई घण्टे तक बिजली, रसोई गैस या कोयले की भट्टी पर गर्म करके उबाला जाता है और आसित जल, जो वाष्प के रूप में निकलता है कन्डेन्सर से ठंडा करके इकट्ठा कर लिया जाता है और इसको 2–3 माह तक सुरक्षित रख दिया जाता है जिससे इसकी सुगन्ध परिपक्व हो जाए। इसके बाद इसे काम में लिया जा सकता है।

सुगन्ध तेल – गुलाब का तेल सीधे प्राप्त नहीं किया जाता है बल्कि आसवन क्रिया के पश्चात् प्राप्त गुलाब जल को एक बर्तन में रात में शीतल स्थान पर खुला रख दिया जाता है। धूल तथा मिट्टी आदि से बचाने के लिए इसे साफ मुलायम कपड़े से ढक दिया जाता है। प्रातःकाल गुलाब जल पर मक्खन की तरह से इसका सुगन्धित तेल उपरी सतह पर आकर तैरने लगता है। इसे शीशे के बर्तनों में एकत्र कर लेते हैं। जब तापक्रम बढ़ जाता है तो यह पिघल कर द्रव अवस्था में आ जाता है। यह तेल हल्का पीला रंग लिए हुए होता है।

गुलकन्द – यह एक परिरक्षित पदार्थ है। इसे गुलाब की पंखुड़ियों से डेढ़ गुनी चीनी मिलाकर तैयार किया जाता है। पंखुडियों को फूलों से अलग कर शक्कर के साथ मसलते हैं या लकड़ी के हथौड़ों से कूटते हैं जिससे पंखुड़ियाँ लुगदी की तरह शक्कर के साथ मिल जाती हैं। इसे फिर शीशे के या स्टेनलेस स्टील के पात्र में भर कर खुली धूप में रख देते हैं। समय–समय पर इसे हिलाते रहते हैं। यह एक महीने बाद उपयोग करने लायक हो जाता है। गुलकन्द पौष्टिक होता है।

पंखुड़ी – गुलाब के फूलों को सुखाकर सूखी पंखुडियाँ तैयार करते हैं जो कई प्रकार के पकवानों में व मृदुपेय पदार्थों में मिलाई जाती है।

गुलाब का शर्बत – गर्मियों में गुलाब का शर्बत एक ताजगीदायक मृदुपेय है। यह कई विधियों द्वारा बनाया जाता है। उद्यान विभाग की प्रयोगशाला में जो विधि विकसित की गई है वह इस प्रकार है :– शक्कर 9 किलोग्राम, पानी 4 लीटर, गुलाब का रस 900 ग्राम, नींबू का सत 35 ग्राम, रसभरी लाल रंग 25 मिलीलीटर, गुलाब एसेन्स 25 मिलीलीटर

विधि – गुलाब की पंखुड़ियों को फूलों से अलग करके मशीन से पंखुडियों का रस निकाल लें और मलमल के कपड़े से छान लें।

शक्कर में पानी मिलाकर गरम करें और नींबू का सत मिला देवें। शक्कर घुलने पर चाशनी को मलमल के कपड़े से छान लें और ठंडा करें। जब चाशनी ठण्डी हो जाए, तब गुलाब का रस, रंग व एसेन्स मिलाकर साफ धुली हुई और सुखाई हुई बोतलों में भरकर ढक्कन लगा कर रखें तथा आवश्यकतानुसार काम में लेवें।

गेंदा (Marigold)

वानस्पतिक नाम *टेजेटिस इरेक्टा (Tagetes erecta L.)*
टेजेटिस पटूला (Tagetes Patula L.)
कुल एसटिरेसी (Asteraceae)
उत्पत्ति मेक्सिको

गेंदा या हजारा एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक मौसमी फूल है। इसकी सुन्दरता एवं टिकाऊपन के कारण पुष्प व्यापार में गुलाब के बाद सर्वाधिक बिकने वाला पुष्प है। इसके फूल विभिन्न आकार एवं रंगों में वर्ष भर उपलब्ध रहते है। गेंदा का विभिन्न रूपों जैसे माला, वेणी, झालर, घर की सजावट, पूजा, गुलदस्ता बनाने जैसे अन्य कार्यो में उपयोग व्यापक रूप से किया जाता है। बौने किस्म का गेंदा, गृहवाटिका, अलंकृत उद्यान, रॉकरी, लटकन टोकरी आदि के लिए उपयुक्त है। गेंदा के फूल पौधों पर लम्बे समय तक खिलते रहते हैं साथ ही इनकी संग्रहण क्षमता अधिक होने के कारण आसानी से कुछ दिनों तक रखे जा सकते हैं। टमाटर, बैंगन, मिर्च आदि सब्जियाँ जिनमें सूत्रकृमि (Nematode) का प्रकोप अधिक होता है, गेंदे को मिश्रित खेती के रूप में लगाकर इसका नियंत्रण किया जा सकता है।

जलवायु – गेंदा को साल भर तीनों ही ऋतुओं में आसानी से उगाया जा सकता है। इसकी अच्छी पैदावार के लिए शरद ऋतु उपयुक्त पाई गई है।पौधों में अच्छी बढ़वार व अधिक पुष्पन के लिए नम जलवायु की आवश्यकता होती है। अधिक तापमान पौधे की वृद्धि एवं पुष्पन को प्रभावित करता है। अधिक ठण्ड एवं पाला भी पौधों को नुकसान करता है तथा फूलों पर कालापन भी दिखायी देता है।

भूमि व तैयारी– गेंदा विभिन्न प्रकार की भूमियों में लगाया जा सकता है, परन्तु अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिए सबसे उपयुक्त रहती है। अधिक क्षारीय व अम्लीय भूमि पौधों की वृद्धि व पुष्प उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।खेती की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके, भूमि को तेज धूप में कुछ समय के लिए खुला छोड़ देते हैं। बाद में देशी हल से जुताई कर खेत को समतल बनाकर सुविधानुसार क्यारियाँ बना ली जाती हैं।

जातियाँ :– गेंदा मुख्यतः दो प्रकार का होता है :–

(1) अफ्रीकन गेंदा (*Tagetes erecta*) – यह बड़े फूल वाली जाति है, जिसके पौधे अधिक ऊँचे व फूलों का रंग पीला व नारंगी होता है। यह किस्म व्यावसायिक खेती के लिए महत्वपूर्ण है। इस जाति की मुख्य किस्में क्राउन ऑफ गोल्ड (पीला), जॉइन्ट–सनसेट (नारंगी), स्पन येलो (पीली), स्पन गोल्ड, येलो फलकी, येलो स्टोन, गोल्डन एज, ओरेन्ज हवाई आदि है।

(2) फ्रेन्च गेंदा (*Tagetes patula*) – इसके पौधे अधिकतर छोटे, बौने तथा छोटे पुष्प जो कि पीले, नारंगी, सुनहरी लाल एवं मिश्रित रंग के होते हैं। इसकी किस्में रेड ब्राकेट, बटर स्कॉच, गोल्डी रस्टी रेड, लेमन जेम, स्कारलेट ग्लो, लेमन ड्रॉप, रेड चेरी, बोनन्जा फ्लेम, येलो बॉय, गोल्डन बॉय, हनी काम्ब, स्कारलेट, सोफिया, क्वीन सोफिया आदि है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली द्वारा अफ्रीकी गेंदे की दो किस्में पूसा नारंगी एवं पूसा बसन्ती विकसित की है, जिनके फूल काफी आकर्षक होते हैं।

प्रवर्धन – आमतौर पर गेंदा को बीज द्वारा ही उगाया जाता है। बीजों को पौधशाला में ऊँची उठी हुई क्यारियों में समान रूप से बिखेर कर बुवाई करें। 3 से 4 सप्ताह बाद पौध रोपाई के लिए तैयार हो जाती है। एक हेक्टेयर की बुवाई के लिए लगभग सवा किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। इसके बीजों की अंकुरण क्षमता वर्ष भर तक अधिक रहती है तथा इससे अधिक

पुराना बीज नहीं बोना चाहिए क्योंकि उसकी अंकुरण क्षमता घट जाती है।

रोपाई – गेंदें की रोपाई क्यारियों में करें। अफ्रीकन गेंदे की रोपाई कतार से कतार 45 से 60 सेन्टीमीटर व पौध से पौध 30 से 45 सें.मी. की दूरी पर करें।

सिंचाई एवं निराई गुड़ाई :– गेंदे को कम पानी की आवश्यकता रहती है। अतः गर्मियों में 7 दिन व सर्दी में 12–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करना चाहिए। रोपाई के 25 दिन बाद खेत में एक हल्की निराई गुड़ाई भी करनी चाहिए। गुड़ाई करते समय पौधों के पास मिट्टी चढ़ाना चाहिए। अफ्रीकन गेंदे के पौधे हवा से जमीन पर नही गिरे, इसके लिए लकड़ी का सहारा भी लगाया जा सकता है। फूलों की अच्छी पैदावार के लिए 200–300 पी. पी.एम. जिब्रेलिक एसिड का पौधों पर फूल आने से पहले छिड़काव करना चाहिए।

गेंदा में पौध रोपण के 40 दिन बाद पिंचिंग करने से पौधे में शाखाएँ जल्दी व अधिक संख्या में बनती हैं, जिससे फूल भी अधिक प्राप्त होते हैं।

प्रमुख कीट –

मोयला, सफेद मक्खी, हरा तेला – ये कीट पौधों की पत्तियों एवं कोमल शाखाओं से रस चूस कर कमजोर कर देते हैं। इससे उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके नियन्त्रण हेतु मिथाइल डिमेटोन 25 ई.सी. अथवा डाइमिथोएट 30 ई.सी. एक मिलीलीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

प्रमुख व्याधियाँ –

चूर्णिल आसिता – इस रोग के प्रकोप से पत्तियों एवं कलियों पर सफेद चूर्णी धब्बे दिखाई देते हैं। नियन्त्रण हेतु कैराथियान /केलक्सिन 1 मिली प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर करें।

फूलों की तुड़ाई एवं उपज – पौध रोपाई के 60–75 दिन बाद फूल तोड़ने लायक हो जाते हैं और औसतन 2 से 3 महीने तक खिलते रहते हैं। फूलों की औसतन उपज 80–100 क्विंटल प्रति हेक्टेयर मिलती है जबकि अफ्रीकन गेंदे की उपज 180–200 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक मिल सकती है।

गुलदाउदी (Chrysanthemum)

वानस्पतिक नाम	*क्राइसेन्थिमम स्पीशीज (Chrysanthemum spp.)*
कुल	एसटिरेसी (Asteraceae)
उत्पत्ति	चीन

अलंकृत बागवानी के पुष्पीय पौधों में गुलदाउदी का विशिष्ट स्थान है। इसके फूल उस समय प्राप्त होते हैं जब अन्य फूल बहुत कम मात्रा में मिलते हैं। राजस्थान में इसकी खेती व्यावसायिक तौर पर सफलतापूर्वक की जाती है।

अधिकांश देशों में इसके पुष्पों का रंग, बनावट व सुन्दरता के कारण गुलाब के बाद यह अति लोकप्रिय फूल है। यह उद्यान मे क्यारियों एवं गमलों दोनो में ही आसानी से उगायी जा सकती है। गुलदाउदी का पुष्पक्रम (Infloresence) हेड या केपीचुलम प्रकार का होता है। प्रत्येक हेड को हम एक फूल कहते है, जो वास्तव में कई छोटे–छोटे फूलों का गुच्छा होता है। वर्तमान में गुलदाउदी की अनेक किस्में प्रचलित हैं, जिनके फूल आकर्षक रंग व आकार के कारण पुष्प सज्जा में माला, वेणी, गजरा, गुलदस्ता, पूजा–अर्चना व अन्य सजावटी कार्यों में उपयोग किये जाते हैं। गुलदाउदी को फूलों की रानी कहा जाता है। प्रकृति एवं कला प्रेमी जापानी खासतौर से इस फूल को महत्व एवं सम्मान देते हैं, इसीलिए यह जापान का राष्ट्रीय पुष्प है।

जलवायु – यह शरद ऋतु का पौधा है। ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में इसके पौधे का विकास अच्छा नहीं होता है। इसकी वृद्धि एवं फूलों के विकास में सूर्य का प्रकाश एवं वायुमण्डल का विशेष महत्व है। इसके फूलों के रंगों के विकास एवं उत्पादन में छोटे दिन वाला शीतकाल का मौसम उपयुक्त रहता है। अच्छे पुष्पन के लिए 8–16 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त पाया जाता है।

भूमि व उसकी तैयारी – गुलदाउदी में अधिक पुष्प उत्पादन के लिए जल निकास युक्त बलुई दोमट या दोमट मिट्टी अच्छी मानी जाती है। मिट्टी में जीवांश पदार्थ की प्रचुर मात्रा, उत्तम रहती है। पौधों व पुष्पों के अच्छे विकास के लिए धूप वाली जगह उपयुक्त मानी गयी है।

खेत की तैयारी में पहली ग्रीष्मकालीन जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करते है, इसके बाद 3–4 जुताई देशी हल से करके खेत

को समतल बनाकर सुविधानुसार क्यारियों में विभाजित करते हैं। अंतिम जुताई के साथ 25–30 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद भी मिला देते हैं।

प्रवर्धन – एकवर्षीय गुलदाउदी बीजों द्वारा उगाई जाती है। इसके बीज नर्सरी में अक्टूबर माह में बोते हैं। बीज बोने से 4–6 सप्ताह बाद तैयार पौध की खेत में रोपाई की जाती है। बहुवर्षीय गुलदाउदी का प्रसारण दो प्रकार से किया जाता है।

(i) कलम द्वारा – इस विधि में कलमें जून के अन्त में सीधे बढ़ने वाले कोमल तनों के ऊपरी भाग से 10 सेन्टीमीटर लम्बी काट कर लगाते हैं। प्रत्येक कलम की नीचे की पत्तियाँ हटा कर रेत की बनी क्यारियों में लगाते हैं तथा लगाने के तुरन्त बाद पानी देते हैं। कलमों में जल्दी जड़ों के फुटाव के लिए, उनके निचले सिरे को सेरेडेक्स पाउडर या इन्डोल ब्यूटाइरिक एसिड रसायन 5 ग्राम प्रतिलीटर पानी में घोल बना कर, उपचारित कर रोपाई करना चाहिए।

(ii) अन्तःभूस्तारियों द्वारा – पुष्प उत्पादन समाप्ति के बाद पौधों को भूमि की सतह के पास से पौधे के आधार का कुछ भाग छोड़ कर पौधों को काट दिया जाता है एवं बाद में पौधों के चारों तरफ गुड़ाई करके एवं खाद डालकर सिंचाई कर दी जाती है। इन कटे हुए भाग से कुछ समय बाद अन्तः भूस्तारियाँ निकलती हैं जिनको अलग–अलग काट कर निकाल कर लगा दिया जाता है। ये नए पौधे को जन्म देती है।

उन्नत किस्में –

(अ) एक वर्षीय – स्थानीय किस्में, सफेद, पीली व बहुरंगीय रोमियों, येलोस्टोन, ग्लोरिया, बलान्का, इस्साबेल

(ब) बहुवर्षीय – बसन्तिका, मीरा, शारदा, कुन्दन, बीरबल साहनी, नानाको, बग्गी, सलेक्शन–5, सलेक्शन–4, रेड गोल्ड इत्यादि।

उद्यानकर्त्ता, किसानों तथा पुष्प सज्जा के लिए उपयोग के आधार पर गुलदाउदी को दो प्रमुख भागों में बाँटा जा सकता है।

(i) छोटे फूल वाली – इनमें फूलों का आकार छोटा होता है जो कि मालाएँ व आभूषण बनाने में उपयोगी रहते है। इसके प्रमुख वर्ग है :– पोम्पन, कोरियन, केसकेड, मारगुरेट, सिलेरेरिया, बटन, एनीमोन व क्विल्ड।

(ii) बड़े फूल वाली – इस वर्ग की गुलदाउदी के पुष्प बड़े आकार के होते है, जिनका उपयोग कटफ्लावर्स के रूप में तथा प्रदर्शनी आदि के लिए किया जाता है, इस वर्ग में इनकर्वड, इन्कर्विंग, रिफ्लेक्स्ड, इर्रेगुलर, सिन्गिल, एनीमोन, डेकोरेटिव, बॉल, क्विल्ड आदि हैं।

रोपाई – गुलदाउदी के स्वस्थ पौधों को व्यावसायिक स्तर पर खेत में, अलंकृत बागवानी में सजावट के लिए गमलों, क्यारियों में रोपण किया जाता है। खेत में पौधों की रोपाई करते समय पौधे से पौधे व कतार से कतार की दूरी छोटे फूल वाली किस्मों में 25 सेन्टीमीटर तथा बड़े फूलों वाली किस्मों में यह दूरी 30 सेन्टीमीटर रखें।

खाद व उर्वरक – गुलदाउदी के पौधों की अच्छी वृद्धि एवं अधिक पुष्पन के लिए भूमि में पोषक तत्वों की उपयुक्त मात्रा का होना आवश्यक है। भूमि की तैयारी के समय दी गयी खाद एवं उर्वरक की मात्रा के अलावा पौध की रोपाई से पहले 100 किलो यूरिया, 450 किलो सुपर फास्फेट तथा 100 किलो म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति हेक्टेयर भूमि में ठीक प्रकार से मिलाना चाहिए। पौधों की रोपाई के 2 माह तक नाईट्रोजन तत्व की अधिक आवश्यकता रहती है। अतः 50 किलो यूरिया रोपाई के चार सप्ताह बाद एवं इतनी ही मात्रा आठ सप्ताह बाद खड़ी फसल में अच्छी प्रकार देकर सिंचाई करना चाहिए।

सिंचाई – वर्षा ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता नहीं रहती है परन्तु लम्बे अन्तराल में सिंचाई करना आवश्यक है। वर्षा के बाद कलियाँ बनते समय व फूल खिलते समय सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है अतः सप्ताह में एक बार सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिए।

देखभाल – गुलदाउदी से अधिक व आकर्षक फूल प्राप्त करने के लिए निश्कलिकायन (Disbudding) तथा चुटाई या शाखाओं को नोचना (Pinching) की क्रिया की जाती है। जब पौधे की लम्बाई अधिक हो जाती है तो प्रमुख शाखाओं को शीर्ष पर से नोच देना लाभकारी होता है। इससे पौधा झाड़ीनुमा होकर फूल अधिक मात्रा में उत्पादित करता है। यह क्रिया प्रथम बार 4 सप्ताह बाद व एक बार पुनः 7 सप्ताह बाद करनी चाहिए।

पुष्प प्रदर्शनी के लिए बड़े आकार व अच्छी आकृति के फूल प्राप्त करने के लिए गुलदाउदी में निश्कलिकायन की क्रिया की जाती है। इसके लिए एक पौधे या एक शाखा पर निश्चित संख्या में पुष्पकलिकाऐं रखकर (प्रति शाखा एक) शेष कलियों को निकाल दिया जाता है।

रोग व कीट –

मोयला (Aphids), पर्णजीवी (Thrips) कीट – ये छोटे आकार के कीट है, जो कोमल शाखाओं व पत्तियों से रस चूसकर नुकसान पहुँचाते हैं। इनके नियंत्रण के लिए मैलाथियान 1मि.ली. प्रति लीटर का छिड़काव करना चाहिए।

सनफ्लावर लेस विंग बग – चमकदार पारदर्शी कीट है जो कोमल पत्तियाँ खाता है। इसके नियंत्रण के लिए डाइमिथोएट 30 ईसी 1 मिली प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

चूर्णी फंफूद रोग (Powdery mildew) – यह फंफूद जनित रोग है, जिससे पत्तियों पर सफेद चूर्ण जमा हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिए कैराथेन ई.सी. का 1 मिली प्रति लीटर का छिड़काव करना चाहिए।

पत्ती धब्बा रोग (Leaf spot) – इसके नियंत्रण के लिए बाविस्टीन 0.1 प्रतिशत के घोल का छिड़काव 10 दिन के अन्तर में करना चाहिए।

फूलों की तुड़ाई व उपज –

गुलदाउदी के फूलने के लिए दिन छोटा और रात लम्बी होना आवश्यक है। प्राकृतिक रूप से ये स्थिति नवम्बर माह में शुरू होती है। फूलों के पूरे खिल जाने पर नियमित रूप से फूलों की तुड़ाई करते रहना चाहिए ताकि पौधों पर नई कलियाँ निरन्तर आती रहें और अधिक उपज प्राप्त हो सके। प्रति हेक्टेयर 100–150 क्विंटल फूलों की उपज प्राप्त होती है। कटफ्लावर की उम्र फूलदान में अधिक बढ़ाने के लिए 1.5 प्रतिशत सुक्रोज 200 पीपीएम हाइड्रोक्सी क्वीनोलिन के घोल में रखें।

ग्लेडियोलस (Gladiolus)

वानस्पतिक नाम – *ग्लेडियोलस स्पीशीज (Gladiolus spp.)*

कुल इरीडेसी (Iridaceae)

उत्पत्ति अफ्रीका

ग्लेडियोलस को मुख्य रूप से कट फ्लावर के रूप में उपयोग में लाते हैं। कन्दीय पुष्पों में इसका विभिन्न रंगों, गुणवत्ता और आकर्षक के कारण अलग ही महत्व है। जिसकी बड़े होटलों व अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बहुत माँग है। इसे बुके बनाने के काम में लिया जाताहै। साथ ही साथ हर्बेशियस बार्डर एवं गमले में भी इसे लगाते हैं। ग्लेडियोलस का फूल जिसको कणिश (स्पाइक) कहा जाता है 50 से 100 सेमी लम्बा होता है, इस पर 10–20 फूल होते हैं जो कि रजनीगंधा की भांति 8–10 दिन तक खिलते रहते हैं। आजकल ग्लेडियोलस के फूलों की बाजार में काफी माँग है।

जलवायु – ग्लेडियोलस वैसे शीतोष्ण जलवायु का पौधा है किन्तु इसकी कई ऐसी किस्में हैं जिन्हें गर्म जलवायु में उगाया जा सकता है। राजस्थान प्रदेश में इसके फूल अक्टूबर से मार्च तक उपलब्ध किए जा सकते हैं। इसके पुष्प व पुष्प डण्डिका (स्पाइक) तापमान, प्रकाश एवं भूमि में नमी से प्रभावित होते हैं, जिससे गुणवत्ता पर प्रभाव पड़ता है यह 15 से 45 डिग्री सेल्सियस तक तापमान सहन कर सकता है। खुली धूप पुष्पन के लिए अच्छी मानी जाती है।

भूमि व तैयारी – इसकी खेती के लिए जल निकास युक्त हल्की भुरभुरी (हल्की दोमट) मिट्टी उपयुक्त मानी जाती है। भारी मिट्टियों में उचित जल निकास के अभाव में पौधों की बढ़वार एवं पुष्पन ठीक नही हो पाता। खेत की 2–3 बार जुताई करके मिट्टी को बारीक कर लेना चाहिए। इसमें 25 टन गोबर की सड़ी खाद, 100 किग्रा फॉस्फोरस तथा 100 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से मिला देना चाहिए।

प्रवर्धन – ग्लेडियोलस का व्यावसायिक प्रवर्धन घनकन्दों (corm) द्वारा किया जाता है। एक घनकन्द से एक वर्ष में 1–3 तक घनकन्दक तैयार हो जाते है। इनका भी प्रयोग, प्रवर्धन के रूप में किया जाता है। बीज द्वारा प्रवर्धन का तरीका नयी किस्म के विकसित करने में किया जाता है। सामान्यतः एक घनकन्द से 4–5 बार फसल ली जा सकती है। इसके बाद इसकी गुणवत्ता नष्ट हो जाती है।

घनकन्द रोपाई – ग्लेडियोलस के घनकन्दों की रोपाई मुख्य रूप से राजस्थान में सितम्बर–अक्टूबर माह में की जाती है किन्तु फूल की उपलब्धता को लम्बे समय बनाए रखने के लिए अगस्त माह से लेकर नवम्बर तक भी रोपाई की जा सकती है। घनकन्दों की रोपाई से पूर्व 0.2 प्रतिशत बाविस्टीन के घोल से उपचारित कर लेना अति आवश्यक है क्योंकि इसमें फ्यूजेरियम नाम की बीमारी लगती है। रोपाई कतार से कतार की दूरी 30 सेन्टीमीटर, पौधे से पौधे की दूरी 20 सेन्टीमीटर रखते हुए करें। घनकन्दों को भूमि में 5.5 से 6.5 सेंमी गहरा लगाना चाहिए। गमलों में एक घनकन्द प्रति गमला की दर से रोपाई करनी चाहिए। घनकन्दों के आकार का फूलों की डंडी पर प्रभाव पड़ता है अतः 4–5 सेमी व्यास का घनकन्द रोपाई के लिए उपयुक्त रहता है। एक हेक्टेयर में कुल घनकन्द 1.5 लाख लग जाते हैं।

उन्नत किस्में –

ग्लेडियोलस की पुष्प के रंग के आधार पर कुछ प्रमुख किस्में निम्न है :–

गुलाबी – रोज, फ्रेन्डशिप, सुचित्रा, पीटर, पीयर, स्पिक एण्ड स्पैन ।

पीला – जेस्टर गोल्ड, अपोलो, यलो स्टोन, ट्रू येलो, नोवा लक्स, मनोहर, मुक्ता, पूनम ।

लाल – यूरोविजन, हटिंग शाँग, सिलविया, ऑस्कर, मैसेगनी, रोज सुप्रीम, ट्रेडर, अग्निरेखा ।

सफेद – स्नो प्रिन्सेज, एम स्टरडम व्हाइट, व्हाइट फ्रेन्डशिप, सेन्सरी, व्हाइट गाडैस, मनीषा, मीरा ।

नीला – हाई स्टाइल, फिडेलिया, विंड सांग, मयूर, ब्लू स्काई, केमेलिया ।

क्रीम – विन्कस ग्लोरी ।

सिंचाई – घनकन्दों के लगाने के 3–4 दिन बाद पहली सिंचाई करना चाहिए। इसके बाद गर्मियों में 5–7 दिन के अन्तर पर तथा सर्दियों में 10–12 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक – आवश्यकता पड़ने पर कमी के लक्षण प्रतीत होने पर भूमि की जाँच कराकर इसमें उर्वरक दिए जा सकते हैं। सामान्यतः लोहे तथा जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई देते हैं। इसके लिए फेरस सल्फेट 0.2 प्रतिशत तथा जिंक सल्फेट 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करें। 3 पत्ती तथा 6 पत्ती अवस्था में नत्रजन 100 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से दें।

निराई–गुड़ाई – घनकन्दों के लगाने के 1.5–2 माह बाद इन पर मिट्टी चढ़ाने से पौधों के गिरने का भय नही रहता तथा पौधों की वृद्धि भी अच्छी होती है। ग्लेडियोलस में सामान्यतः 4 से 5 निराई–गुड़ाई की आवश्यकता रहती है। लम्बे बढ़ते पौधों को सहारा देना भी लाभदायक रहता है।

फूलों की कटाई –कट फ्लावर्स के लिए उगाए गए पौधों पर पुष्प डंडी पूरी विकसित हो जाने के बाद जब सबसे नीचे वाली कली के फूल का रंग दिखने लगे तब डंडी को सुबह या शाम के समय तेज धार वाले चाकू से काट कर पानी से भरी प्लास्टिक की बाल्टी में एकत्रित कर लेना चाहिए। पुष्प डंडी को गमले में अधिक दिनों तक रखने के लिए इसमें 20 प्रतिशत सुक्रोज तथा 200 पी.पी.एम. हाइड्रोक्सी क्वीनोलीन के घोल में 24 घंटे तक पड़ा रहने दें। इस उपचार से पुष्प डंडी दो सप्ताह तक 1 से 2 डिग्री सेंटिग्रेड तापमान पर ताजा बनी रहेगी।

घनकन्दों की खुदाई – जब पौधा पीला पड़ने लगे तब सिंचाई बन्द कर देना चाहिए एवं जब पौधा पूरी तरह सूख जाए तब खुदाई करके घनकन्द एवं कार्मल्स निकाल कर मिट्टी साफ करके 0.2 प्रतिशत बाविस्टीन के घोल में 30 मिनट तक उपचारित कर ठंडी एवं सूखी जगह पर संग्रहीत कर लेना चाहिए। व्यावसायिक स्तर पर इन घनकन्दों को बोरी में भरकर शीतगृह में 3^0 से 4^0 से. तापक्रम तथा 90 प्रतिशत आर्द्रता पर रख देना चाहिए।

कीट व रोग – ग्लोडियोलस के पौधों को कटवर्म तथा सेमीलूपर नामक कीट नुकसान पहुँचाते हैं। इनके नियंत्रण के लिए नुवान 1.5 मिली का एक लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। घनकन्दों को उपचारित करके रोपाई करने से प्रायः घनकन्द विगलन रोग का प्रकोप नही होता है।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न–

1. पुष्पराज की उपाधि निम्न में से किस पुष्प को दी गयी है?
   (अ) ग्लेडियोलस (ब) गुलदाउदी
   (स) गुलाब (द) गेंदा
2. चेती व देशी गुलाब का प्रवर्धन मुख्यतः किस विधि से किया जाता है?
   (अ) कलम (ब) कलिकायन
   (स) गूटी (द) बीज
3. गेंदा का प्रवर्धन किस विधि से किया जाता है?
   (अ) कलम (ब) कलिकायन
   (स) गूटी (द) बीज
4. सूत्रकृमि प्रभावित मृदाओं में किस फसल की खेती की सिफारिश की जाती है?
   (अ) ग्लेडियोलस (ब) गुलदाउदी
   (स) गुलाब (द) गेंदा
5. गुलदाउदी की उत्पति किस देश में हुई है?
   (अ) जापान (ब) चीन
   (स) अफ्रीका (द) भारत
6. ग्लेडियोलस का प्रवर्धन किस विधि से होता है?
   (अ) बीज (ब) कन्द
   (स) घनकन्द (द) कलम
7. आकर्षक पुष्प प्राप्त करने के लिये निश्कलिकायन व चुटाई की क्रिया किस पुष्प फसल में की जाती है?
   (अ) ग्लेडियोलस (ब) गुलदाउदी
   (स) गुलाब (द) गेंदा

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

8. राज्य में गुलाब की खेती कहाँ–कहाँ होती है ?
9. गुलाब के व्यावसायिक उत्पादों के नाम लिखिए।
10. गुलाब के प्रवर्धन की व्यावसायिक विधि का वर्णन कीजिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

11. खेती योग्य गुलाबों का वर्णन करिए।
12. गुलाब में कृन्तन का महत्व लिखिए।
13. गुलाब में खाद उर्वरक प्रबन्धन का वर्णन कीजिए।

14. देशी गुलाब की खेती का वर्णन निम्न शीर्षकों में कीजिए –

(i) जलवायु (ii) भूमि व तैयारी

(iii) पौध रोपण (iv) खाद उर्वरक (v) कृन्तन

15. गेंदा की किस्मों का वर्गीकरण कीजिए।

16. गेंदा की पौध तैयार करने की विधि लिखिए।

17. गेंदा में उर्वरक एवं खाद प्रबन्धन लिखिए।

18. गेंदा की देखभाल में किन–किन बातों का ध्यान रखतें हैं ?

19. गेंदा की खेती का निम्न शीर्षकों में वर्णन कीजिए –

(i) जलवायु (ii) भूमि

(iii) किस्में (iv) बीज की मात्रा व पौध तैयार करना

(v) पौध रोपण (vi) फूलों की तुड़ाई व उपज

20. ग्लेडियोलस का महत्व लिखिए।

21. ग्लेडियोलस की खेती के लिए भूमि व उसकी तैयारी के बारे में बताइए।

22. ग्लेडियोलस का प्रवर्धन किस तरह किया जाता है ?

23. ग्लेडियोलस के घनकन्दों की रोपाई किस तरह की जाती है ?

24. ग्लेडियोलस की खेती में खाद उर्वरक प्रबंधन का वर्णन कीजिए।

25. ग्लेडियोलस की पुष्प रंग के अनुसार जातियाँ बताइए।

उत्तर माला – 1. (स) 2. (अ) 3. (द) 4. (द) 5. (ब) 6. (स) 7. (ब)

अध्याय–13
औषधीय पौधों की सामान्य जानकारी एवं उपयोगिता
(Medicinal Plants : General Description & Uses)

1. तुलसी (Ocimum)

प्रचलित नाम (Common Name) : तुलसी, तुलसा, तुलीन
वानस्पतिक नाम (Botanical Name) : *ओसीमम* प्रजाति (*Ocimum* species)
कुल (Family) : लेमिएसी (Lamiaceae)

तुलसी औषधीय गुणों की दृष्टि से एक 'अमृत बूटी' है। भारत में ही नहीं, अपितु विश्व में व्यापक रूप से तुलसी पाई जाती है। तुलसी का जन्म स्थान एशिया के उत्तरी पूर्वी क्षेत्र माने जाते हैं। तुलसी के पौधे आज भी जंगली अवस्था में विश्व के अनेक क्षेत्रों में पाये जाते हैं। हिन्दू समाज में तुलसी की पूजा की जाती हैं और उनके द्वारा प्रतिदिन पौधे का जल चढ़ाना एक पुनीत कार्य माना जाता है, जिसका वर्णन पुराने ग्रन्थों में मिलता हैं। तुलसी एक ऐसा पौधा है जिसके सेवन से कई स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का समाधान होता है। इसकी हरी पत्तियों का सेवन उपयुक्त है, लेकिन औषधियों के लिए इसके तेल का उपयोग किया जाता है। इसके तेल की विदेशों में भारी माँग है, जिसके निर्यात से विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है।

तुलसी अनेक सुगंधित तेलों का अच्छा स्रोत है जो हल्के हरे रंग का होता हैं। इसके तेल में कपूर (कैम्फर), सिट्रॉल, जिरोनीओल, निनाइल ऐसीटेट, मिथाइल, चार्वीकॉल, यूजीनॉल, और प्रसाधन सामग्री बनाने में किया जाता हैं। डेंटल क्रीम, माउथवाश, बेकरी, सूप, सलाद, सॉस, जैम, मुरब्बे और औषधीय रूप में इसके विभिन्न अंगों का उपयोग किया जाता है। तुलसी के रस को शहद के साथ लेना कैंसर रोग के उपचार में उपयोगी है।
तुलसी स्वाद में चटपटी, कड़वी हल्की रुखी, पचने पर कूट एवं गर्म स्वभाव की होती हैं। यह विभिन्न रोगों का नाश करने वाली दिव्य औषध है। यह मलेरिया, श्वाँस, कफ, खाँसी, उल्टी, महिलाओं में होने वाले रोग, गठिया, सनायु, गुर्दा की खराबी से उत्पन्न शोथ, पथरी, सफेद दाग, रक्त में कोलस्ट्रोल की मात्रा बढ़ जाना आदि में नियमित रूप से सेवन करने से लाभ होता है। तुलसी में औषधीय गुणों के अतिरिक्त अनेक ऐसे भी गुण हैं जो जीवन एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं। तुलसी का नियमित सेवन ह्रदय को शक्ति प्रदान करता है।

2. सफेद मूसली

प्रचलित नाम (Common Name) : सफेद मूसली
वानस्पतिक नाम(Botanical Name) : *क्लोरोफाइटम बोरिविलिएनम* एल (*Chlorophytum borivilianum L.*)
कुल (Family) : लिलिएसी (Liliaceae)

भारतीय भाषाओं में नाम

गुजराती	– धोली मूसली
मराठी	– सफेद अथवा सुफेला मूसली
मलयालम	– शैदेबेली
तमिल	– तानिवितांग

मूसली को मानव मात्र के लिए प्रकृति द्वारा प्रदत्त बहुमूल्य उपहार कहा जाये तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। इसका उत्पत्ति स्थान उष्ण व उपोष्ण कटिबंधीय अफ्रीका है। और वहीं से यह पूरे विश्व में फैली है। विश्व में 300 से अधिक प्रजातियाँ हैं, जिनमें से 85 प्रतिशत आज भी अफ्रीका में पाई जाती हैं। इसका उपयोग आयुर्वेदिक, एलोपैथिक, यूनानी दवाइयों के निर्माण हेतु प्रयुक्त होने वाली यह दिव्य जड़ी बूटी है। सामान्यतः यह पौधा प्राकृतिक रूप से जंगलों में पाया जाता है, परन्तु जंगलों की अंधांधुध कटाई एवं अपरिपक्व दोहन के फलस्वरूप अब यह पौधा लुप्त होने के कगार पर है और यही कारण है कि अब इसकी विधिवत खेती की ओर पर्याप्त ध्यान दिया जाने लगा है।

सफेद मूसली एक कंदयुक्त पौधा होता है, जिसकी अधिकतम ऊँचाई 45 सेमी तक होती है। इसकी कंदिल जड़ें जिन्हें कंद अथवा फिंगर्स की संज्ञा दी जाती है। जंगलों में यह वर्षा ऋतु में स्वयं उग आती है। ग्रामीण व आदिवासी इसे उखाड़कर सस्ती दरों पर बेच देते हैं। इस स्थिति में मूसली, पूर्णतया तैयार नहीं हो पाती है, जिसके कारण औषधीय गुण भी विकसित नहीं हो पाता है। उच्च गुणवत्ता वाली सफेद मूसली का बाजार मुल्य 1800–2000 रुपये प्रति किलोग्राम है, जबकि विदेशी मुद्रा में इसका बाजार भाव 3000 रुपये प्रति किलोग्राम तक है।

औषधीय उपयोग – सफेद मूसली शक्तिवर्धक, मेधावर्धक, प्रसवोपरान्त शारीरिक क्षतिपूर्ति, हृदय दुर्बलता, टॉनिक स्वरूप, बुढ़ापे में कमजोरी दूर करने वाली प्रसिद्ध औषध, प्रजनन क्षमता में वृद्धि के लिए उपयोगी, माताओं में दूध बढ़ाने के लिए भी उपयोगी है। सफेद मूसली को दूसरी शिलाजीत की संज्ञा दी जाती है। चीन, उत्तरी अमेरिका में पाये जाने वाले पौधे जिन्सेंग (पेनेक्स) का विकल्प माना गया है। विदेशों में इसे कैलाग जैसे फ्लेक्स बनाये जाते हैं जिनका पौष्टिक नाश्ते के रूप में उपयोग किया जाता हैं।

3. सनाय (Indian Senna)

सामान्य नाम (Common Name) : सोनामुखी, सनायमकी
वानस्पतिक नाम (Botanical Name) : *केसिया अंगस्टीफोलिया* वहल (*Cassia angustifolia Vahl.*)
कुल (Family) : फैबेसी (Fabaceae)

सनाय (*केसिया अंगस्टीफोलिया*), कुल फैबेसी व उपकुल सिजलपिनाइडी का पौधा है। अरब और सोमालिया में सनाय (स्वर्ण पत्ती) के पौधे जंगली रूप में मिलते हैं। एक अन्य प्रजाति भारत में पाई जाती है। जिसका नाम है *केसिया एक्यूटिफोलिया* विभिन्न भाषाओं में इसके अलग–अलग नाम हैं, जैसे– संस्कृत में मार्कण्डी, मार्कण्डिका(अभिनव) हिन्दी में सनाय, सनायमकी (मुखी), बंगाली में सोनामुखी, गुजराती में मीठी आवल सोनामुखी, कोंकणी में सेनामक्की, अंग्रेजी में इंडियन सेन्ना आदि।

दक्षिण भारत के तिन्नेवेली, मदुराई एवं त्रिचरापल्लि आदि में बड़े पैमाने पर इसकी खेती की जाती है। तिन्नेवली में होने वाली सनाय अरबी की अपेक्षा श्रेष्ठ होती है। भारत में प्रतिवर्ष 20 करोड़ रुपये की सनाय की पत्तियों का निर्यात किया जाता है। राजस्थान के जोधपुर, बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर व नागौर जिलों की शुष्क जलवायु सनाय के लिए विश्व में सर्वाधिक उपयुक्त है।

औषधीय उपयोग (Medicinal Uses) – सनाय मुख्यतः एक रेचक (Laxative) का कार्य करता है। इसकी पत्तियों एवं फलियों मे सेनोसाइड पाए जाते हैं। जिनका उपयोग औषध निर्माण के लिए किया जाता है। वर्तमान में अनेकों आयुर्वेदिक, एलोपैथिक, यूनानी, एवं होम्योपैथिक औषधियों के निर्माता इसकी पत्तियों का उपयोग विभिन्न औषधियों के निर्माण हेतु कर रहे हैं। उदाहरण के लिए कई कब्जनाशक चूर्ण में सनाय की पत्तियाँ ही होती हैं। इस पौधे से प्राप्त रॉल (Resin) का **'इजिफल असाकदुस'** यूनानी दवा बनाने हेतु उपयोग किया जाता है, जिसका मस्तिष्क और पेट से लसीले पदार्थ निकालने के लिए उपयोग किया जाता हैं।

इसके जूस व पाउडर को कैन्सर व टयूमर के लिए उपयोग किया जाता है। सनाय बीजों को अमलतास के साथ दही में पीस कर त्वचा पर उपस्थित रिंग वॉर्म (Ring-worm) के उपचार हेतु उपयोग किया जाता हैं।

यद्यपि सनाय की पत्तियों का उपयोग प्रमुख पेट की बीमारियों से सम्बन्धित औषध निर्माण के लिए किया जाता है परन्तु इसके साथ–साथ अन्य रोगों की रोकथाम के लिए अन्य औषधियाँ भी बनाई जा रही हैं जैसे पीलिया, अस्थमा, मलेरिया बुखार, अपच आदि।

सनाय का सेवन करने के उपरान्त 6–10 घंटे के अन्दर रेचन क्रिया पूरी हो जाती है। आदती कब्ज के रोगियों में कोष्ठ शुद्धि के लिए सनाय उपयुक्त औषध है। विकृत दोषों के निर्हरण के लिए यह एक उत्कृष्ट औषध है। इसी कारण तृतीयक, चातुर्थिक आदि पर्यायज्वर, पित्तज एवं सोदाजन्य आमवात (संधिवात) एवं कटिशूल, गंधसी, वातरक्त एवं कुपचन के कारण मल शुद्धि न होने से शरीर में मल संचय होने पर अमलताश आदि अन्य उपयुक्त औषधियों के साथ इसका सेवन करने से दूषित पित्त आदि और व्याधिजनक विषों का शरीर से निर्हरण होता है और नवीन शुद्ध पित्तादि उत्पन्न होते है और औषध अपना कार्य भली–भाँति करती है। शोषणोपरान्त सनाय का शरीर से निस्सरण मूत्र, स्तन्य आदि सभी शारीरिक स्रावों से होता है। अतएव स्तनपान कराने वाली स्त्रियों में सनाय का सेवन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए क्योंकि माता के सनाय सेवन करने पर स्तनन्धय –शिशु पर भी उसका प्रभाव पड़ सकता हैं। ऐसे शिशुओं में रेचन कराने के लिए सनाय के इस गुण का उपयोग भी किया जाता है।

4. गिलोय

प्रचलित नाम (Common Name) : गुडुची, गिलोय
वानस्पतिक नाम (Botanical Name) : *टीनोसपोरा कार्डीफोलिया* एल. (*Tinospora cordifolia L.*)
कुल (Family) : मेनिसपर्मिएसी (Menispermaceae)

आयुर्वेद शास्त्र में गिलोय को ज्वर की एक उपयोगी औषध मानकर जीवन्ती नाम दिया गया है तथा अमृत के समान गुणकारी होने से इसे अमृता नाम से जाना जाता है। यह समस्त भारत में विशेषकर गरम प्रान्तों में अधिक होती है। हिन्दी में इसे गिलोय,अंग्रेजी में टिनोस्पोरा तथा लेटिन में टिनोस्पोरा कार्डिफोलिया कहते हैं। गिलोय की बहुवर्षीय, चिकनी एवं मांसल लता बहुत विस्तार में वृक्षों पर फैल जाती है। शाखाओं से डोरे के समान शोरियाँ निकलकर भूमि की ओर लटकती हैं। इसके पत्ते पान के समान, 2–4 इंच के घेरे में गोलाकार नुकीले, चिकने, पतले, सात से नौ शिराओं युक्त एवं 1–3 इंच लम्बे पर्णवृन्त से युक्त होते हैं। प्रायः वसन्त ऋतु में इसके पुराने पत्ते पीले होकर गिर जाते हैं और ज्येष्ठ माह तक नवीन पत्ते निकल आते हैं। उसी समय हरापन युक्त पीले रंग के अथवा केवल पीले रंग के फूलों के गुच्छे आते

हैं। इसके फल मटर के समान होते हैं और पकने पर लाल हो जाते हैं तथा बीज कुछ टेढ़े और चिकने होते हैं।

गिलोय के मूल तथा तने का उपयोग औषध के लिये किया जाता है। ताजी अवस्था में तने की छाल हरी तथा मांसल रहती है तथा उस पर पतली भूरे रंग की बाह्य त्वचा रहती है, जिसकी पपड़ी निकलती रहती है। इस पर छोटे–छोटे गड्ढे होते हैं। इसको काटने से अन्दर का भाग चक्राकार दिखाई देता है। ताजी एवं हरी गिलोय अधिक लाभप्रद होती है। गर्मी में मई माह के अन्त में इसका संग्रह करना चाहिए। प्रयोग के पूर्व इसके ऊपर की छाल खुरचकर निकाल दी जाती हैं। इसमें गन्ध नहीं होती, किन्तु स्वाद कड़वा होता है।

उपयोग

आयुर्वेदिक मतानुसार गिलोय कटु, तिक्त तथा कषाय रस युक्त एवं विपाक में मधुर रस युक्त रसायन, संग्राही, उष्णवीर्य, लघु बलकारक, अग्निदीपक, तथा त्रिदोष, आम, तृषा, दाह, प्रमेह, कास, पाण्डुरोग, कामला, कुष्ठ, वातरक्त, ज्वर और वमि को दूर करती है। यह श्वास, कास, अर्श, मूत्रकृच्छ, हृद्रोग और वात इन सब का नाश करने वाली होती हैं।

गिलोय पत्र आग्नेय, सर्वप्रकार के ज्वर को दूर करने वाले, लघु, कषाय, कटु तथा तिक्त रस युक्त, विपाक में मधुर रस युक्त, रसायन, बलकारक, उष्ण, ग्राही एवं त्रिदोष, तृषा, दाह, प्रमेह, वात, रक्तविकार–वातरक्त, कामला, कुष्ठ तथा पाण्डुरोग को दूर करने वाले होते हैं।

आचार्य चरक ने गिलोय को मुख्यतः वातहर माना है, जबकि बाद के कई आचार्य इसे त्रिदोष हर, रक्तशोधक, प्रतिसंकरामक मानते हैं। विभिन्न अनुपानों के प्रयोग से यह सभी दोषों का शमन कर रक्त शुद्धि करती है, ऐसा माना जाता है। आचार्य सुश्रुत ने गिलोय को तिक्त रस युक्त तथा पित्त, कफ शामक कहा है तथा आचार्य वाग्भट्ट के अनुसार यह प्रमेह, मधुमेह की तथा सुजाक की परम औषध है एवं चक्रदत्त के अनुसार यह ज्वर, कुष्ठ व श्लीपद की श्रेष्ठ औषध है।

नवीन अनुसंधानों से गिलोय का व्याधि प्रतिकारक गुण व्यापक रूप से प्रमाणित हुआ है। जीर्ण पूर्ति केन्द्र जनित विकार, जीर्ण विषम ज्वर तथा यकृत की हीन कार्यता आदि में कुछ काल तक गिलोय का प्रयोग करते रहने से लाभ होता है।

5. ईसबगोल (Psyllium)

सामान्य नाम (Common Name) : ईसबगोल

वानस्पतिक नाम (Botanical Name) :

प्लांटैगो ओवेटा फार्स्क (*Plantago ovata* Forsk)

कुल (Family) : प्लांटैजिनेसी (Plantagineceae)

ईसबगोल एक महत्वपूर्ण औषधीय फसल है। इसका मूल उत्पत्ति स्थान पश्चिम एशिया है। भारत इसका सर्वाधिक उत्पादक एवं निर्यातक देश है। भारत में मुख्य रूप से गुजरात एवं राजस्थान में उगाया जाता है। गुजरात के मेहसाणा और साबरकांठा जनपदों में लगभग 50,000 हेक्टेयर क्षेत्र में इसकी खेती की जा रही है जबकि राजस्थान के जालौर, पाली, जोधपुर, बाड़मेर, नागौर और सिरोही जनपदों में लगभग 5000 हेक्टेयर क्षेत्र में उगाया जा रहा है। विगत कुछ वर्षों में मध्यप्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों, जैसे – मंदसौर जनपद की मल्हार गढ़, मनासा, नीमच, एवं मंदसौर तहसीलों में भी लगभग 5000 हेक्टेयर क्षेत्र में इसका उत्पादन किया जा रहा है। ईसबगोल उत्पादन की सरल प्रक्रिया थोड़े समय में अधिकाधिक लाभ दिलाने वाली एवं इसके उत्पादन की बिक्री हेतु पर्याप्त निर्यात बाजार के साथ–साथ शासकीय मंडी जैसी उत्तम व्यवस्था के कारण इस औषधीय फसल को भारतीय कृषकों ने सहर्ष स्वीकार किया है। उल्लेखनीय बात यह है कि वर्तमान में भारत से निर्यात होने वाली औषधीय फसलों में ईबगोल का प्रथम स्थान है। कुल भारतीय उत्पादन का 90 प्रतिशत भाग विदेशों को निर्यात किया जाता है। जिससे विदेशी मुद्रा अर्जित होती है। यदि इसे एक बहुउपयोगी एवं निर्यातोन्तमुखी फसल की संज्ञा दी जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

औषधीय उपयोग (Medicinal Uses)

ईसबगोल के बीज एवं भूसी का विभिन्न प्रकार से औषध निर्माण में उपयोग किया जाता है, ईसबगोल पर आधारित अनेकों औषधियों और पाउडर एवं भूसी भारतीय और अर्न्तराष्ट्रीय बाजारों में प्रचलित है।

– ईसबगोल की भूसी पुराने कब्ज, अतिसार, पेट की सफाई, बवासीर मूत्र संस्थान, आँव–पेचिश जैसी शारीरिक रोगों को दूर करने हेतु आयुर्वेदिक औषधियों में मुख्य रूप से प्रयुक्त की जाती है।

– ईसबगोल का काढ़ा सर्दी जुकाम में पिया जाता है।

– इसका सौन्दर्य प्रसांधन में उपयोग किया जता है।

– ईसबगोल का डाईंग, केलिको प्रिंटिंग, खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों, जैसे– आइसक्रीम निर्माण और रंग रोगन के काम में भी प्रयोग किया जाता है।

– ईसबगोल का बचा छिलका प्रोटीन का मुख्य स्त्रोत होता है जिसे मुर्गियों के आहार के रूप में उपयोग किया जाता है।

6. रतनजोत

वानस्पतिक नाम – *जेट्रोफा कर्कस*एल. (*Jatropha quercus L.*)

कुल – यूफोरबियेसी

उत्पत्ति – उत्तर–पश्चिम व मध्य भारत

उपयोगी भाग – बीज

रतनजोत या जंगली अरण्ड एक झाड़ीनुमा 2–7 फीट ऊँचा वन औषधीय पौधा है, जो भारत के सभी प्रान्तों में पाया जाता है। यह साधारणतया पड़त भूमि एवं कृषि भूमि के चारों ओर बाड़ के रूप में पाया जाता है। राजस्थान में यह दक्षिणी अरावली पर्वतमाला के जनजाति बाहुल्य क्षेत्र में पाया जाता है। इसका औषधीय उपयोग अधिक होने के कारण यह अतिमहत्व का हो गया है। इसमें पाया जाने वाला तत्व कैंसर प्रतिरोधक क्षमता वाला होता है। अतः कैंसर सम्बन्धी औषधियों में इसका उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त बीजों द्वारा प्राप्त तेल का उपयोग दाद, खुजली, गठिया, लकवां आदि बीमारियों में किया जाता है। इसके पत्तों के स्वरस का उपयोग बवासीर तथा उदर सम्बन्धी रोगों में किया जाता है।

औषधीय उपयोग के अतिरिक्त रतनजोत औद्योगिक दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण पौधा है। इसे सौन्दर्य प्रसाधन, साबुन बनाने, रंगाई में, पशु आहार, कुक्कुट आहार, कीटनाशक आदि बनाने के कच्चे पदार्थ के रूप में भी उपयोग किया जाता है। रतनजोत के बीजों के तेल का जैविक ईंधन (बायो डीजल) के रूप में भी काम ले सकते हैं। ऐसा माना जा रहा है कि आने वाले समय में यह ईंधन के रूप में मील का पत्थर साबित होगा।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न–

1. तुलसी का वानस्पतिक नाम है –
   (अ) *क्लोरोफाइटम*
   (ब) *टीनोसपोरा कार्डीफोलिया*
   (स) *ओसीमम प्रजाति*
   (द) *जेट्रोफा कर्कस*

2. हिन्दू धर्म में किस पौधे की पूजा कर जल अर्पित करते है?
   (अ) सोनामुखी (सनाय) (ब) गिलोय
   (स) ईसबगोल (द) तुलसी

3. किस औषधीय पौधे का उपयोग रेचक (Laxative) के रूप में होता है?
   (अ) सनाय (ब) तुलसी
   (स) सफेद मूसली (द) गिलोय

4. किस पौधे के बीजों का तेल (बायोडीजल) जैविक ईंधन के रूप में उपयोगी है?
   (अ) ईसबगोल (ब) तुलसी
   (स) रतनजोत (द) सफेद मूसली

5. सफेद मूसली का भारतीय बाजार में मूल्य औसतन होता है –
   (अ) 1800–2000 रू/किलो
   (ब) 500 रू/किलो
   (स) 4000 रू/किलो
   (द) 200 रू./किलो

6. भारत से सर्वाधिक निर्यात किये जाने वाली औषधीय फसल है –
   (अ) तुलसी (ब) गिलोय
   (स) ईसबगोल (द) सफेद मूसली

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

7. औषधीय गुणों की दृष्टि से कौनसा पौधा 'अमृता' कहलाता है ?
8. सफेद मूसली का वानस्पतिक नाम क्या है ?
9. किस पौधे में रोग प्रतिकारक गुण पाया जाता है ?
10. ईसबगोल की भूसी का प्रयोग करने से किस रोग में सर्वाधिक लाभ होता है ?
11. ज्वर व रक्तविकार को दूर करने में किस औषधीय पौधे का उपयोग होता है ?
12. सौंदर्य प्रसाधन व साबुन बनाने में किस पौधे का उपयोग होता है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

13. तुलसी के रस व तेल में कौन से रसायन पाये जाते हैं ?

14. सफेद मूसली में औषधीय गुण कौन से हैं ? केवल चार बताइए।

15. रिंग वार्म के उपचार हेतु किस औषधीय पौधे का उपयोग किया जाता है ?

16. ईसबगोल का कुल (Family) व वानस्पतिक नाम बताइए।

17. रतनजोत का औद्योगिक महत्व बताइए।

निबंधात्मक प्रश्न–

18. तुलसी के पौधों के उपयोगिता का वर्णन कीजिए।

19. सफेद मूसली की पहचान उपयोग व औषधीय महत्व का सविस्तार वर्णन कीजिए।

20. गिलोय की पहचान, उपयोग व औषधीय महत्व सविस्तार बताइए।

21. ईसबगोल की खेती का प्रसारण, निर्यात व औषधीय महत्व बताइए।

उत्तरमाला–

(1.) स (2.) द (3.) अ

(4.) स (5.) अ (6.) स